प्रथमबार

केवल डाकव्यय भेजने से पुस्तक बिना मूल्य मिलेगी

मुद्रक जं के शर्मा

इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस इलाहाबाद

जन्म	दीक्षा	आचार्य पद	निर्वाण
१९४५	१९६१	१९९०	१९९९
माघ सुद ५	माघ सुद ५	मगसिर सुद २	आसोज वदी १०

हिज होलीनेस श्री जगत् गुरु महान योगिराज
निरन्तर स्मरणीय पुरन्दर भट्टार्क आचार्य-सम्राट्
श्री श्री १००८ श्री विजय शान्ति सूरीश्वरजी भगवान

स

म

र्प

ण

वहुत दिनों की साध आज पूरी होने दो।
श्रीचरणों में गीत-सुधा अर्पित होने दो।
मेरे मन का भाव प्रभो! सग्रह मे देखो।
विन्दु-विन्दु में सिन्धु भरा छन्दों में लेखो।

प्रस्तावना

"नास्ति तत्त्व गुरो परम् ।" महिमन् स्तोत्र

भावार्थ—सद्गुरु से बढकर कोई भी तत्त्व नही है ।

—o—

अन्य किसी वस्तु की खोज मत कर । केवल एक सत्पुरुष की खोज कर और उसके चरण कमलो में आत्मा को सर्वस्पेण समर्पित करके प्रवृत्ति करता रह । यदि फिर मोक्ष न मिले तो मेरे पास से लेना ।

(श्रीमद् राजचद्र)

—o—
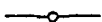
ध्यान मूल गुरोर्मूर्त्ति., पूजा मूल गुरोर्पदम् ।
मन्त्र मूल गुरोर्वाक्यं, मोक्षमूल गुरोर्कृपा ॥

—o—
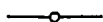
वेद थके ब्रह्मा थके, थाके शकर शेष ।
गीता को भी गम नहीं, जहँ सद्गुरु उपदेश ॥

—o—
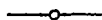
अतिशय महान् पुण्य योग से, आज से लगभग पन्द्रह वर्ष पहले, मुझे श्रीआबूजी तीर्थ में विश्ववन्द्य, जगतगुरु आचार्य सम्राट् श्रीविजयशान्ति सूरीश्वरजी भगवान् के दर्शनो का अपूर्व लाभ, उन्ही पूज्य गुरुदेव के अनुग्रह से, सहज स्वाभाविक रीति से प्राप्त हुआ ।

ज्यो-ज्यो मैं आचार्य भगवान् के अधिकाधिक सम्पर्क में आया, त्यो-त्यो अनुभव द्वारा मेरा यह विश्वास दृढ़ होता रहा कि वे इस विश्व में बडे से बडे अवतारी पुरुष थे ।

अखिल विश्व के शान्त रस के परमाणु उन्हीं में एकत्रित हुए हों ऐसी अनुपम शान्ति आप श्री में रहा करती थी।

विश्व-प्रेम का अखण्ड स्रोत आप श्री से निरन्तर बहता था। मुझे तो ऐसा भास होता था कि आप श्री के एक रोम में से निकला हुआ प्रेम ही सारे जगत् में फैला हुआ है।

आप श्री सभी प्राणियों को आत्मवत् समझते थे और सभी में समभाव रखते थे।

विश्व की समस्त पवित्र वस्तुओं को एकत्रित कर उन्हें देखने से जो आनन्द प्राप्त होता है उससे भी अधिक आनन्द आप श्री के परम पवित्र शान्त मुखारविन्द का दर्शन करने से प्राप्त होता था।

सुदूर देश देशान्तर से यूरोपियन, पारसी, हिन्दू, मुसलमान, राजा महाराजा, अमीर और गरीब सभी जाति और धर्म के मनुष्य आचार्य श्री के दर्शनों के लिये आते थे। सभी लोग आचार्य भगवान् को विश्व के एक आदर्श महापुरुष की तरह पूज्य मानते थे। गुरुदेव प्रत्येक व्यक्ति को विश्व प्रेम का उपदेश देते थे। संख्यातीत मनुष्यों ने आपके उपदेश से सत्य मार्ग ग्रहण किया।

भूतकाल में अनेक अवतारी महापुरुष हुए हैं। वे कैसे रहे होंगे इस बात का यथार्थ भान आचार्य भगवान् के दर्शनों से इस समय भी प्रत्यक्ष हो जाता था।

आचार्य भगवान् में अनन्त आत्मशक्ति प्रगट होते हुए भी वे सदा निरभिमान हो नम्रता के साथ रहते थे। किसी समय आप एक छोटे बालक की तरह [illegible] जान पड़ते तो दूसरे समय आप महान् [illegible] के रूप में [illegible] दिखाई देते थे। आप एकाकी होते हुए भी [illegible] सदा प्रसन्न रहते थे। शत्रु-मित्र निन्दक-पूजक सुख [illegible] में आप सदा समभाव ही रखते थे। ऐसे ज्ञानी

महापुरुष के गुणगान करने में स्वय बृहस्पति भी असमर्थ है, तो फिर मेरा सामर्थ्य ही क्या ?

आचार्य भगवान् का यथार्थ स्वरूप समझना तो बड़ा ही कठिन था किन्तु आप श्री ही अनुग्रह कर जिस भक्त को अपना स्वरूप बतलाते वह आपको सहज ही समझ सकता था। मेरा नम्र अभिप्राय तो यह है कि पूर्व अनेक जन्मों में सद्गुरु की भक्ति द्वारा सस्कार प्राप्त भव्यात्मा, आचार्यदेव के प्रति जिस परिमाण में श्रद्धा भक्ति रखते थे उसीके अनुरूप वे उन्हें समझ सकते थे।

श्रीमद् राजचन्द्र ने सच ही कहा है—सत्पुरुष में अडिग श्रद्धा, उसकी भक्ति में तल्लीनता, सर्वस्व समर्पण एव आज्ञापालन यही मोक्षप्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ एव सरल मार्ग है।

किशनचंद लेखराज

आ
भा
र

इस सग्रह् में जिन सरस्वती-पुत्रो की वाणी का
सकलन हुआ है, वे सब सग्रह्-कर्त्री के
हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं।

विषय-सूची

॥ श्री धर्म तीर्थ शान्ति गुरुभ्यो नमः ॥

अनन्य शरण को देनेवाले, निरन्तर स्मरणीय स्वर्गीय श्री सद्‌गुरु भगवान् को सतत वन्दन ।

जब-जब दुनिया में धर्म का नाश होता है तब-तब अवतारी महापुरुष सत्य, धर्म तथा शान्ति की स्थापना के लिये जन्म धारण करते है—

इस मरुधर देश को धन्य है ।
इस अहीर जाति को धन्य है ।
पुण्यवती माता वसुदेवी को धन्य है ।
पुण्यात्मा रायका श्री भीमतोला जी को धन्य है ।

समस्त ससार में जिनके विश्वप्रेम का सन्देश फैल रहा है, विश्व के चारो कोनो मे जिनके नाम से कोई अजान नही है वे इस विश्व की महान् से महान् विभूति-रूप जगद्‌गुरु आचार्यदेव श्रीविजयशान्ति सूरीश्वरजी भगवान् है ।

आप श्री के गुरु का नाम श्री तीर्थ विजयजी भगवान् और उनके भी गुरु का नाम महान्, योगीन्द्र, त्रिकालदर्शी श्रीमद् धर्मविजयजी भगवान था । इन तीनो ही महापुरुषो ने अहीर जाति में जन्म धारण किया था ।

श्रीधर्मविजयजी भगवान् का जीवनचरित्र अद्‌भुत है । उसका अति सक्षिप्त वर्णन यहाँ दिया जाता है—

जोधपुर के पास जसवन्तपुरा परगने में माडोली नामक एक गाँव है । वहाँ एक रायकाजी दरजोजी करके रहते थे । दरजोजी के कोलोजी नामक एक इकलौता पुत्र था। कोलोजी का जन्म सवत् १८४८ की आषाढ सुदी १५ के शुभ दिन हुआ था । दरजोजी के देहावसान के पश्चात् कुटुम्ब-निर्वाह का भार कोलोजी के सिर आ पडा । बचपन से ही कोलोजी

को ईश्वर एवं भगवद्भक्ति में अटल श्रद्धा थी। उनके जीवन-निर्वाह का साधन पशुओं के पालन-पोषण पर निर्भर था। एक बार मारवाड़ में बड़ा भयंकर दुष्काल पड़ा। अन्नपानी और पशुओं के लिये घास मिलना दुष्कर हो गया। ऐसे कठिन समय में वे कुटुम्ब को साथ लेकर देशाटन के लिये निकल पड़े। मार्ग में बीमारी फैल जाने से कितने ही पशु मर गये। परिवार के लोगों में से भी केवल कोलोजी और वेलजी नामक उनका एक डेढ़ साल का बालक जीते रहे। घूमते फिरते वे पूना के समीप चोक नामक गाँव में आये। वहाँ मारवाड़ से आये हुए, उस गाँव के निवासी कराजी नामक एक जैन-गृहस्थ रहते थे। कोलोजी ने अपने पुत्र के साथ उनके यहाँ पशुओं की सार-सँभाल के लिये नौकरी कर ली। कोलोजी की अपूर्व भक्ति-भावना देखकर सेठ ने उन्हें पंच परमेष्ठी मंत्र सिखाया। कोलोजी अधिक समय ध्यान में ही तल्लीन रहते थे।

एक बार उनके पुत्र वेलजी को जंगल में सर्प ने डस लिया। उस समय कोलोजी ईश्वर के ध्यान में निमग्न थे। ध्यान से जब जागे तो *उन्होंने सर्पदंशित अपने पुत्र को मृत्यु की शरण में देखा।* पुत्र को अपनी गोद में लेकर उन्होंने यह दृढ़ प्रतिज्ञा की—यदि मेरा यह पुत्र बच जायगा तो मैं अन्न जल ग्रहण करूँगा नहीं तो परमेष्ठी मंत्र का ध्यान करते करते यह शरीर छोड़ दूँगा। सेठ तथा अन्य लोगों ने यह प्रतिज्ञा छोड़ देने के लिये उन्हें बहुत समझाया परन्तु ईश्वर में अविचल श्रद्धा रखते हुए वे अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहे। उपवास के तीसरे दिन श्रद्धा के प्रबल प्रताप से कोई संत महात्मा वहाँ उपस्थित हुए और पुत्र को जीवित किया। तुरन्त ही कोलोजी ने अपने इस पुत्र को महात्माजी के चरणों में रख दिया और कहा—आपने इसको जीवनदान दिया इसलिये मैं आपका अतिशय ऋणी हूँ। मैं अब अपना शेष जीवन भगवद्भक्ति में बिताना है इसलिये आपसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझे इस पुत्र की क्या व्यवस्था करनी चाहिये। उत्तर में महात्माजी ने कहा—इस पुत्र को तुम किसी साधु अथवा यति

को वहरा देना और तुम भी जैन दीक्षा अंगीकार कर लेना। इससे आत्म-ज्ञान सम्पादन कर तुम एक महापुरुष के रूप में पूजे जाओगे, यह तुम्हें मेरा आशीर्वाद है।

तुरन्त ही महात्माजी अदृश्य हो गये। इसके बाद कोलोजी ने तीन उपवास का पारणा किया। कुछ मास बाद उन्होने अपने पुत्र वेलजी को एक यति को वहरा दिया जो वेलजी यति के नाम से मडार गाँव में प्रसिद्ध हुए। इसके बाद कोलोजी को मणिविजयजी नामक एक जैन-साधु मिले। उनके पास उन्होने सवत् १८७३ की माह सुदी ५ के दिन दीक्षा ग्रहण की। तभी से उनका नाम मुनि महाराज श्रीधर्मविजयजी रखा गया।

खडाला के घाट में कुछ समय ध्यान में व्यतीत करने के बाद श्री धर्मविजयजी महाराज श्री को स्वभावत सहज ही आत्मज्ञान की प्राप्ति हुई। आप इतने बडे शक्तिशाली समर्थ पुरुष थे कि एक स्थान पर विराजते हुए भी आप उसी समय दूर-दूर देशो में अनेक स्थानो पर अपने भक्तो को दर्शन देते थे। एक समय आप रामसीण गाँव से विहार कर आगे पधार रहे थे। उस समय आपके साथ वहुत से लोग थे। जेठ का महीना था। गर्मी सख्त पड रही थी। साथ के लोगो को प्यास सताने लगी। आस-पास में पानी मिलने का कोई उपाय न था। इसलिये वहुत से लोग घवरा गये। अनन्त-दयाल श्रीगुरुदेव भगवान् के पास अपनी तर्पणी में थोडा सा जल था। आपने उसमें से थोडा सा पानी पृथ्वी में एक गढा करा कर डाला और उसके ऊपर एक कपडा ढँकवा दिया। तुरन्त ही लब्धि के प्रभाव से उस गढे में पानी उमड आया। हर एक मनुष्य ने उसमें से अपनी प्यास बुझाई।

एक समय श्रीधर्मविजयजी भगवान् रामसीण में विराजते थे। चैत्र-सुदी पूर्णिमा का दिन था। उन्ही दिनो रामसीण गाँव के कई एक श्रावक पालीताणा यात्रा के लिये गये हुए थे। वे पहाड के ऊपर आदेश्वर दादा के दर्शन कर वाहर निकले तो उन्होने वृक्ष के नीचे गुरु श्री को देखा।

वन्दना के पश्चात् उन्होंने प्रश्न किया—भगवन् ! आप कब पधारे ? प्रत्युत्तर में 'ओं शान्ति' शब्द सुनाई दिये। उसी दिन श्रावकों ने पालीताणा से रामसीण पत्र लिखा कि आज दिन यहाँ पहाड़ ऊपर श्रीधर्मविजयजी महाराज साहेब के दर्शन हुए हैं। क्या आप श्री अभी रामसीण में हैं अथवा विहार कर गये हैं। रामसीण से इस प्रकार उत्तर आया कि चैत्र-सुदी पूर्णिमा के दिन प्रातःकाल दस बजे गुरु श्री ध्यान करने के लिये जंगल में पधार गये थे। शाम को चार बजे के बाद आप वापिस लौट आये और अभी यहीं विराजते हैं। इस प्रकार आप श्री अपनी अनन्त आत्मशक्ति द्वारा एक ही समय दूर-दूर देशों में अनेक स्थानों पर अपने भक्तों को दर्शन देते थे। आप श्री के जीवन-चरित्र में इस प्रकार की अनेक अद्भुत और अलौकिक बातें हैं जिन्हें लिखना संभव नहीं है।

मृत्यु का समय भी एक महीने पहिले ही आपने अपने भक्तों को बता दिया था और कहा था कि जिस स्थान पर मेरे मृतदेह का दाह-संस्कार करो वहाँ पालकी के चारों तरफ नीम के चार सूखे खूँटे लगा देना। अग्नि लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। नीम के जो चार खूँटे गाड़ोगे वे भविष्य में नीम के चार वृक्ष होंगे। मेरी मृत्यु के बाद भविष्य में जब कोई महान् आदर्श व्यक्ति प्रकट होगा तब एक नीम का वृक्ष अदृश्य हो जायगा।

आपके कहे अनुसार ही संवत् १९४१ की आषाढ़ बदी ६ को प्रातःकाल आपश्री का देहावसान हुआ। हजारों लोग बिना किसी जाति-भेद-भाव के आपश्री की पालकी अग्निसंस्कार के लिये जंगल में ले गये। चार नीमके खूँटे गाड़कर बीच में गुरु श्री की पालकी रखी गई। पालकी के आसपास चन्दन की लकड़ियाँ चुनी गई। इन्द्र महाराज ने भी उस समय इतनी अधिक वर्षा की कि जल का कोई पार न रहा। आग स्वतः आपश्री के दाहिने पैर के अँगूठे में से प्रकट हुई। शरीर के ऊपर के उपकरण ध्वजा और जमीन में गाड़े हुए चार नीम के खूँटे वगैरह अखंड बने रहे केवल

शरीर ही जलकर भस्म हुआ। उपकरण तथा ध्वजा को लोग प्रसाद रूप से ले गये। नीम के चारो सूखे खूंटे भविष्य में चार नीम के वृक्ष हुए। माडोली में दाह-सस्कार वाली जगह पर गुरुश्री की देवली बनाई गई है। देव्ली में गुरुश्री की चरणपादुका पघराई गई है। जब गुरुदेव की तिथि आती है तब वहाँ प्रति वर्ष बडा मेला भरता है। हज़ारो दर्शनार्थी उलट पडते है। दर्शनार्थ आने वाले प्रत्येक मनुष्य को माडोली में प्रति वर्ष जिमाया जाता है। उस दिन गुरु श्री के चरणो से प्रात काल खास समय पर दूध तथा गगा जल बहता है। जगत्गुरु आचार्यदेव श्रीविजयशान्ति सूरीश्वरजी भगवान् उस दिन जहाँ कही भी होते हैं वहाँ से पधार कर दिन में किसी समय किसी एक को दर्शन देते हैं।
श्रीधर्मविजयजी भगवान् देवलोक पधारने के बाद भी कभी-कभी अपने परमभक्तो को दर्शन देते हैं।

उपरोक्त सारी वस्तुस्थिति अभी भी माडोली में विद्यमान है। केवल नीम का एक वृक्ष अभी हाल में अदृश्य हो गया है और तीन वृक्ष मौजूद हैं।

श्रीधर्मविजयजी भगवान् के शिष्य महान् तपस्वी महात्मा श्रीतीर्थ-विजयजी भगवान् हुए। आपश्री भी जाति के अहीर थे। आपका जन्मस्थान मणादर गाँव था। आपश्री ने सारा जीवन तपश्चर्या में पूरा किया। सवत् १९८४ की फागुन सुदी ८ के दिन मारवाड में मुडोआ गाँव में आपश्री का देवलोकवास हुआ।

जगतगुरु आचार्य सम्राट् श्रीविजयशान्तिसूरीश्वरजी भगवान् का जीवन-चरित्र अनुभव करने योग्य है। आपश्री का जीवन-चरित्र अत्यन्त अद्भुत अलौकिक एव अगम्य है इसलिए वाणी द्वारा यथार्थ कह सकने में कोई समर्थ नही है तो फिर लेखनी द्वारा लिखकर उसका वर्णन कैसे किया जा सकता है।

अहीर कुल का इतिहास

परम पूज्यपाद आचार्यदेव का जन्म अहीर (रबारी) जाति में हुआ। शिक्षा एवं संगठन के अभाव से यह जाति आजकल अवनतावस्था में है। इस जाति की वर्तमान हीन-अवस्था देखकर इसे सामान्य पशु चराने वाली जाति समझना इसके साथ अन्याय करना है। इस जाति का भूत-काल का इतिहास समुज्ज्वल एवं स्फूर्तिमय है। भारत की सर्वस्व-रूपा गोजाति की रक्षक होने के नाते यह जाति भारत की रक्षा करने वाली कही जा सकती है। समय-समय पर प्राणों की बाजी लगाकर इस जाति ने गौ जाति की रक्षा की है। भारतवासियों के लिए इस जाति ने जो महान् त्याग एवं बलिदान किया है उसके लिए भारत का बच्चा-बच्चा इस जाति का कृतज्ञ रहा है और रहेगा। वास्तव में ये लोग क्षत्रिय हैं। प्राचीन समय में क्षत्रिय लोग गौ जाति की रक्षा करना अपना मुख्य कर्तव्य समझते थे। महर्षि वसिष्ठ ने गौ जाति की बड़ी सेवा की थी। यदुवंश में महाराज कृष्ण ने गौ जाति की इतनी सेवा की कि वे गोपाल के नाम से आज तक प्रसिद्ध हैं। आजकल राजाओं को "गौ ब्राह्मण-प्रतिपालक" आदि से सम्बोधित करते हैं और यह सार्थक शब्द है। महाराज दिलीप भी सेवा के खातिर कुछ समय के लिए राज्य छोड़कर जंगल में सन्यासी की तरह रहे एवं प्राणों की बाजी लगाकर गौरक्षा व्रत का पालन किया। यही कारण है कि आज भी क्षत्रिय लोग गौ ब्राह्मण प्रतिपालक कहे जाते हैं। आज भी इस जाति में चावड़ा परमार भीम सोलंकी राठौड़ यादव मकवाना आदि क्षत्रियों की अनेक शाखाएँ विद्यमान हैं। रायका रबारी देसाई आदि नामों से यह जाति प्रसिद्ध है। ये नाम भी इस जाति का शासक क्षत्रिय जाति होना सिद्ध करते हैं। [illegible] राय का अर्थ राज्य है। राज्य करने के कारण

ये लोग रायका कहलाये। रवारी शब्द दरवारीका अपभ्रंश रूप है। दरवारी शब्द का 'द' उड गया और शेष रवारी रह गया। इसी तरह देश में सर्व प्रथम आने के कारण यह जाति देसाई नाम से मशहूर हुई। इस जाति के आचार-विचार एव रीति-रिवाज भी क्षत्रियो से प्राय मिलते-जुलते है। रोटी-व्यवहार तो आज भी उस जाति का क्षत्रियो के साथ है। भाट लोगो के पोथे जिनमें कि इस जाति का इतिहास मिलता है, देखने से मालूम होता है कि प्राचीन काल में क्षत्रियो के साथ इस जाति का वेटी-व्यवहार भी रहा है।

गीता में क्षत्रियो के स्वाभाविक गुण वतलाते हुए कहा है—

शौर्यं तेजो घृति दक्षिय युद्धे चाप्यपलायनम्
दानमीश्वर भावाश्च क्षात्र कर्म स्वभावजम्॥

भावार्थ—शूरता, तेज, धैर्य, दक्षता, युद्ध से न भागना और ऐश्वर्य—ये क्षत्रियो के स्वाभाविक गुण है।

क्षत्रियो के ये स्वाभाविक गुण इस जाति के व्यक्ति-व्यक्ति में आज भी पाये जाते है। ब्रह्मचर्य पालना, लाल वस्त्र धारण करना, दड रखना आदि क्षत्रियो के लिए मनु महाराज की कही गई वातें आज भी इस जाति के रहन-सहन और आचार-विचार में पाई जाती है।

इस जाति का इतिहास यह भी वतलाता है कि इन लोगों ने गुजरात और मारवाड में अनेक वस्तियाँ वसाई। राष्ट्र और धर्म की रक्षा के लिए भी इन्होने क्षत्रियो की ही तरह वीरता के साथ अपना खून वहाया है। गुजरात, सौराष्ट्र, मारवाड आदि के इतिहास में उनकी वीरता की असख्य अमर आख्यायिकाएँ मिलेंगी। जगदेव सोमोड और उनकी राया और हरी कन्याओ की धर्मपरायणता और वीरता की कहानी से मालूम होता है कि इस जाति में पद्मावती और प्रताप की तरह ही क्षत्रियो का खून वहता है।

जगदेव सोमोड़ के ताया और हंसीना नाम की दो कन्याएँ थीं। उनके रूप और गुण की प्रशंसा सुन मुग़ल सम्राट् ने उन्हें अपने अन्तःपुर में रखना चाहा। सम्राट् की बुरी नियत का पता लगने पर जगदेव ने अपनी कन्याओं को अन्यत्र भेज दिया। इस पर मुग़लों ने खोज-बीन आरम्भ कर दिया। जगदेव का खून खौल उठा। उसने विशाल-मुग़ल-सेना का वीरता के साथ सामना किया पर उसकी परिमित शक्ति अधिक समय तक मुग़ल सेना के आगे न टिक सकी। जगदेव के स्वर्गारोहण के बाद मुग़लों ने दोनों कन्याओं का पता लगाया। उन्हें साम्राज्य का प्रलोभन दिया गया। धर्म के आगे तीन लोक की सम्पत्ति को ठुकराने वाली वीर बालाओं ने प्रलोभन का जवाब तलवार से दिया। अनेक मुग़ल-सैनिकों के खून से अपनी तलवार की प्यास बुझाकर उन्होंने भी अपने पिता का अनुसरण किया।

श्री आचार्य देव के चरणों में समर्पित श्रद्धांजलियाँ

स्वर्गीय श्री जगद्गुरु आचार्यदेव महान् योगिराज श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी भगवान् के दिव्य जीवन-चरित्र की रूपरेखा को प्रकट करने वाली कुछ श्रद्धाञ्जलियाँ—

मैंने अपने जीवन काल में यदि कोई अद्भुत वस्तु देखी है तो ये योग-निष्ठ श्री शान्तिसूरीश्वरजी महाराज हैं। बाहर से ये केवल साधारण दिखते है, और जब ये वार्तालाप करते है तब भी ऐसा प्रतीत होता है कि कोई साधारण पुरुष ही बोल रहा है। आप श्री का प्रदर्शन भी स्वभावत ऐसा है कि लोग सहज ही भूल कर बैठें तो कोई बडी बात नही। किन्तु मुझे तो ऐसा प्रतीत हुआ कि ये कोई उच्चकोटि के महान् आध्यात्मिक ज्ञान के भडार है। इन महापुरुष को हम लोग सहज में समझ नही सकते हैं, कारण कि ये योग में और इसी तरह आध्यात्मिक ज्ञान में इस क़दर गहरे उतरे है कि अठारह मास तक उनके समीप रहकर भी एक विद्वान इन्हें पूरी तरह समझ नहीं सकता। वर्तमान काल के इतने साधुओ में केवल ये ही योग क्रिया और आध्यात्मिक-ज्ञान के विषय में अग्रणी है। ऐसे महान् योगीश्वर को समझने के लिए महान् शक्तिशाली आत्मा, बहुत लम्बा समय लेकर ही इन्हें शायद कुछ समझ सकता है।

परम कल्याणमत्र
पुस्तक में से

योगशास्त्र आदि अनेक आध्यात्मिक ग्रन्थो के रचयिता, योगनिष्ठ आचार्य भगवान्
श्री विजयकेसर सूरीश्वरजी महाराज

If ever in my life I have come across any wonder He is the Ascetic Shanti Surishwarji Maharaj

Outwardly He appears to be a man of ordinary calibre and even when He speaks it becomes evident that an ordinary man is speaking His looks is also so simple that people easily mistake about His greatness. But, I felt, He is a store-house of lofty spiritual ideas We cannot easily understand this great personality as His spiritual knowledge has reached such a depth in consequence of His Yogic practices that a certain learned scholar could not thoroughly realise His greatness even after eighteen months stay with Him. Of all the great saints of to-day He is assuredly the foremost in respect of Yogic and spiritual matters Should any powerful soul keep company with Him for a long time with a view to understanding this great King of Ascetics (Yogiraj) he might perhaps grasp a little of Him.

(Sd). ACHARYA BHAGWAN SHREE VIJAY KESHAR SURISHWARJI MAHARAJ
Editor of Yoga-Shastra and other books on Spiritualism

Quoted from
Param Kalyan Mantra

आचार्य देव गाव मे बिराजते थे उस समय आपने बम्बई में दर्शन किये—

पिछले उपवास की रात को मुझे एक दिव्य प्रकाश दिखाई दिया। उसमें आबू में विराजते योगिराज जगतगुरु आचार्य भगवान् श्री विजय-शान्ति सूरीश्वरजी महाराज के दर्शन हुए। उन्होने आदेश दिया कि अपना हठ त्याग कर पारणा कर लो। इससे मुझे पूर्ण श्रद्धा हुई कि आचार्य का जो आदेश है उसका प्रकृति के साथ सम्बन्ध है।

पहले जब आबू से तार द्वारा श्री कृपालु आचार्य देव ने पारणा करने की आज्ञा दी थी, उस समय मुझे उन पर विश्वप्रेमी महापुरुष के रूप में श्रद्धा न थी। जब मैं उनके पास रहा और उनके सम्पर्क में आया तब भी मुझे उन पर पूर्ण श्रद्धा न थी और मैं यह समझता था कि उनका और मेरा धर्म्म जुदा है। दूसरी अनेक शकाओ के साथ कई लोग उनके विरुद्ध बोलते थे, इस कारण भी मुझे उन महापुरुष की यथार्थता पर पूरी पूरी श्रद्धा न थी।

लेकिन पिछले उपवास में मुझे उनका भास तथा प्रकाश मिला और इस कारण उनके प्रति विश्व के महात्मा पुरुष के रूप में मेरा विश्वास स्थापित हुआ। इसीलिये उनके आदेश को प्रकृति की प्रेरणा समझ कर मैंने पारणा कर लिया।

स्थानकवासी जैनपत्र
ता० ११-१-१९३७

तपस्वी मुनि श्री
मिश्रीलालजी के आन्तरिक उद्गार

While residing at Abu Acharya-Deva made Himself manifest in Bombay

"In the night of my last fast I perceived a hallow of Light in the midst of which I found the presence of Yogiraj Jagat-Guru Acharya Bhagwan Shree Vijay Shanti Surishwar Maharaj, then staying at Abu His Holiness ordered me to terminate

the fast and not insist on same any more. I had full confidence in the fact that this order of the Acharya Deva bore some relation with Nature.

"While at first this gracious Guru-Deva asked me by a telegraphic message to break the fast I had no faith in Him as a great personality of Universal Love and even when I came in contact with Him and kept His Holy Company I had no full confidence in Him and I thought that His religion was different from mine. Besides, the blasphemy of other people was added to my own misunderstanding of Him wherefore I had no full confidence in the reality of His greatness

But during the period of my last fast I caught a glimpse of His Holy Light which led to the foundation of my faith in him as a great personality of the world. This is why I regarded His order as an inspiration from Nature and broke my fast."

Date 11 1 1) 7 — A sincere expression of
Quoted from — TAPASWI MUNIJI
Sthanakvasi Jain Patra — MISHRILALJI

मैंने दुनिया के हर एक देश की यात्रा की है। मैं अनेक महापुरुषों से मिला हूँ। अन्त में मैं गुरुदेव महाराज श्री शान्तिसूरीश्वरजी से भी मिला। हम पाश्चात्य लोगों में इतना तो ठीक है कि हम किसी बात को बराबर समझ कर ही मानते हैं। हम अपने मन में पूछते हैं कि प्रत्येक

वस्तु में क्या वात है ? मिस मेयो ने मदर इण्डिया नामक जो पुस्तक लिखी है उसे लिखते हुए उसने वडी भूल की है। कारण यह है कि हिन्दुस्तान में अभी तक ऐसे देवरत्न विद्यमान है तो फिर उसने क्या समझ कर यह पुस्तक लिखी होगी ? अव तो मै उसे वरावर जवाव दूंगी, जिससे कि उसकी भूल मालूम हो जायगी और दुनिया पूरी तरह सचाई को समझ सकेगी। गुरुजी परमेश्वर ही हैं इसमें कोई भी सन्देह नही है।

दी पॉवर आव इण्डिया आदि
पुस्तको की रचयित्री
महान विदुषी मिस माइकेल पीम,
सम्पादिका, ट्रिव्यून हेरल्ड, न्यूयॉर्क

परम कल्याणमत्र
पुस्तक में से

I had travelled in every country of the world and had come in touch with many great souls At last I met Gurudev Shree Shanti Surishwarji It is, of course, obvious for the Westerners that they accept a thing only upon rational understanding. We, Westerners must inquire into the reason of everything

Miss Mayo, the Author of Mother India must have committed a great blunder in writing that book The reason is that while such a precious gem of a God (Deva-Ratna) is existing in India still now what might impel her then to write such a book as that Now indeed, I must deal out to her proper replies that she might be brought to her senses and that the world might understand the Truth in a perfect manner

Gurudev is indeed a re-incarnation of God and there cannot be any shadow of doubt about it. ("Gurudev is a God no doubt")

Quoted from
Param Kalyan Mantra

MISS MICHAEL PIM,
Editor Tribune Herald New York Author of 'The Power of India' etc and A Great Scholar

ये एक उच्च कोटि के महापुरुष हैं। फिर भी इनका हृदय बालक की तरह खरा और निर्दोष है। महात्माओं के समान शास्त्र में कुछ भी लिखे हों पर ऐसी बुद्धि और हृदय का विकास, बल तथा सरल बालभाव और इनका ऐसा सुन्दर समन्वय भाग्य से ही कहीं देखने को मिलता है। इनके साथ मेरा जो परिचय हुआ इससे मुझे तो यही लगा कि यही तो महात्मापन का यथार्थ स्वरूप है। जब जब मैं इनके पास गया हूँ तभी इनके सान्निध्य में मेरे हृदय एवं मस्तिष्क के भावों में ऐसी एकता प्रतीत हुई है कि केवल इनकी ओर देखने और इनका उपदेश सुनने के सिवा और दूसरी कोई भी वृत्ति मन में उत्पन्न ही नहीं होती। प्रत्येक दर्शनार्थी को यही भास होता है ऐसा मैंने देखा है। महात्मापन की व्याख्या करने वाली इससे अधिक और क्या वस्तु हो सकती है? लोकैषणा की इच्छा से आप बहुत परे हैं। मुझे बहुत से महापुरुषों के परिचय में आने का अवसर मिला है परन्तु आप श्री का सान्निध्य मुझे अपूर्व प्रतीत हुआ है। कैसे और किस अभ्यास का यह परिणाम होगा? यदि यह समझ में आ जाय और तदनुसार करना सम्भव है ऐसी सुगमता मालूम हो तो सम्भव है वैसा करने का मन हो जाय।

परम कल्याणमन्त्र
पुस्तक से

सर प्रभाशंकर पट्टणी
भावनगर

"This is a great man of a very high order and yet His heart is as pure and simple as that of a child Whatever might the Shastras say about the signs of greatness it is through sheer good fortune that one can find such a beautiful combination of head and heart with childlike simplicity From my own acquaintance with Him I could only make out that He was an incarnation of real greatness Whenever I drew near Him I could realise such a peculiar unity between intellection and feelings that I had no other desire but to look at Him and listen to His instructions Similar was also the desire in every other visitor too, as I observed What else can there be that is so much expressive of greatness He is quite averse to popular fame I had occasions to come in touch with many great men but I felt His company extremely wonderful How and with what endeavour could this greatness be achieved If this were comprehensible and if it were possible to act up to this method with ease probably our mind would run after it."

Quoted from SIR PRAVA SHANKAR PATTANI
Param Kalyan *Bhawnagar*
Mantra

विश्व के आदर्श पुरुषो में श्री शान्ति सूरीश्वरजी श्रेष्ठ हैं। गुरुदेव शान्ति सूरीश्वरजी को सभी कुदरती शक्तियाँ प्राप्त है। यदि कोई मनुष्य

Vijay Shanti Surishwarji Bhagwan, the greatest Yogiraj in the world to whose holy feet I present my soul for purification. Raj Yoga or natural Yoga is the highest Yoga of all the Yogas.

By constant devotion or Bhakti to Sadguru Bhagwan, by obeying His orders, implicitly by loving Him with all your heart, then little by little the grace of Sadguru Bhagwan will be felt on us and the salvation will be realized.

Oh! Bhagwan, it takes millions of lives of a soul to know you. Through your kindness one can easily recognise you! Your words are the essence of all the Shastras Universal love is your gospel. You welcome all irrespective of castes creeds or nationality I have personally seen the Philosophers and cultured men of the west coming to pay their respect at the holy feet of His Holiness the greatest Yogiraj in the world.

I therefore gladly draw the attention of all my dear friends travellers and explorers that by seeing with devotion and attaining the benevolence of Sadguru Bhagwan, all their motto of travelling around the world will be served at this place only

GEORGE JUTZELAR
(Switzerland)

परम पूज्य विश्ववन्दनीय आचार्य सम्राट् योगीन्द्र चूडामणि श्री श्री १००८ श्री श्री श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी भगवान् के प्रति पूर्व व पाश्चिमात्य देशो के प्रसिद्ध आत्मारामजी महाराज परिव्राजकाचार्य, दर्शननिधि, एम० ए०, विद्यावारिधि, व्याख्यान वाचस्पति एव प्रसिद्ध हिस्टोरियन (इतिहासज्ञ) साउथ केनेडा का लिखा हुआ एक आदर्श चित्र—

हे सद्गुरु भगवान्! आप पवित्र से भी पवित्र हो इसलिये हे भगवन्! आपका मिलना जगत भर के सव पवित्र पदार्थों के मिलन से भी विशेष है।

आप एक हो, आप अनन्त हो, प्रभो! आप शिव हो, आप शक्ति हो, आप कृष्ण हो, आप ईश्वर हो, आप निर्गुण हो और आप सगुण हो, और इन दोनों से परे हो—आप पवित्र और सत्य से भी आगे हो—आप वहुत ही वडे हो, आप सर्वशक्तिमान् हो, आप सर्वस्व हो और सवसे भी परे हो।

आपको पुण्य और पाप भी स्पर्श नही कर सकते है क्योकि आप इन दोनो से परे हो।

आपको पहचानने के लिये प्रयास करें तो लाखो जन्म की आवश्यकता है। किन्तु आपकी कृपा हो जाय तो अल्प समय में आपको पहचाना जा सकता है।

आप जगत् के कल्याण के लिये अदृश्य रूप से विश्व के चारो ओर दिव्य सन्देश पहुँचा रहे हो।

हे प्रभो! हे भगवन्! आप सर्वोपरि और देवाधिदेव हो।

(जैनध्वज अखवार, अजमेर, ता० १–२–१९३७)

A brief note of the illustrious writings from renouned Sanatan Dharmacharya (monk) Shri

His Holiness is said to have performed many miracles On one occasion, it is said, a rich merchant who came for Gurudeo's Darshan invited about 1000 people to a feast, but on that day, unexpectedly, about 5000 people gathered to obtain the saint's blessings and the post was in a quantary as and how to provide them with food But His Holiness bade him not to be purturbed and when the time came to distribute food, it was found that there was not only enough for all but also enough to feed 500 more was left over

STATESMAN CALCUTTA
Tuesday, January 7, 1936

सवत् १६६१ की साल में वैशाख महीने सारणपुरा (मारवाड) के समीप वीसलपुर गाँव में प्रतिष्ठा महोत्सव था। आसपास के गाँवो के मिलाकर चालीस हजार से ऊपर लोग इकट्ठे हुए थे। जगतगुरु आचार्य भगवान् उस समय वीसलपुर पधारे हुए थे। चालीस हजार से अधिक सख्या वाले इस जनसमूह के लिये आवश्यक जल का प्रवन्ध करने का कोई साधन न था। मारवाड जैसे प्रदेश और गर्मी के दिनो में पानी का कैसे प्रवन्ध किया जाय ? इस सम्वन्ध में गाँव के लोग वहुत चिन्तित थे। परन्तु जगद्गुरु आचार्य भगवान् की अद्भुत आत्मशक्ति और लब्धि के प्रताप से पानी के प्राकृतिक झरने फूट पडे और जल धारा वह निकली।

आठ दिन तक अनगिनते हजारो आदमी इकट्ठे हुए। परन्तु भोजन अथवा पानी की किसी भी दिन कमी न पडी। जगतगुरु आचार्य भगवान्

Atmaramji Maharaj Paribrajakacharya, M.A., Scholar of religious (Darshannidhi), Vidya Vandhi and well known Historian etc. from South Canada towards Gurudev Vishva Vandaniya Acharya Samrat Yogindra-Chudamani Shree 1008 Shanti Surishwarji Maharaj Sahib

JAIN DHWAJA, AJMER
1st January 1937

"O Lord, you are the purest and hence to see you is better than to meet all the pure things of the world combined. You are one and numerous as well You are the Shiva and the Shakti You are the Krishna, you are the truth and purest of the pures and beyond these also You are higher than the highest. Almighty and All you are. Sins can never beseige you and virtues as well, as you are beyond the limit of these. It takes millions of lives of a soul to know you if one, tries this, but through your kindness, one can easily recognise you Your words are the essence of all the Shashtras (scriptures)

For the welfare of the all living beings you are sending your blessings through wireless around the world O Lord, you are Highest of the Highest and God of the Gods.

श्री आचार्य भगवान् माउन्ट आबू मे विराजते थे उसी समय आपने बम्बई में दर्शन दिये ।

बम्बई के सुप्रसिद्ध सेठ मगलदास की धर्मपत्नी बहिन श्री सुन्दर बहिन (कच्छ-भुजपुर-निवासी—सेठ देवजी टोकरशी कम्पनी, भारत बाज़ार, बम्बई न० ६) तथा कच्छ दुर्गापुर निवासी, बम्बई के सुप्रसिद्ध सेठ हीरजी भाई घेला भाई की सुपुत्री को श्री जगतगुरु आचार्य भगवान् श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी महाराज साहेब द्वारा दिये गये दर्शन—

बहिन श्री सुन्दर बहिन ने अपने धर्मपति तथा कुटुम्ब से कहा कि श्री आचार्य भगवान् आबूजी से मुझे दर्शन देकर कह गये है इसलिये मैं सभी को जतलाती हूँ कि रविवार की रात को मैं श्री गुरुदेव भगवान् के चरणो में जाऊँगी । उसी दिन रात को बहिन श्री ने आत्मजागृति पूर्वक ध्यानस्थ अवस्था मे देह त्याग किया था । बडे बडे पडित और शास्त्रकार भी समाधि मरण नही पाते, वह मरण इन बहिन श्री ने प्राप्त किया था । यदि मृत्यु की अन्तिम घडी में शान्ति और समाधि हो जाय तो अवश्य समाधि मरण होता है । 'समाही मरण च बोही लाभो' (आवश्यक सूत्र)— समाधि मरण हो और बोधि बीज की प्राप्ति हो । जिसके भव का अन्त आने वाला होता है उसको ही समाधि मरण होता है । पर वह समाधि मरण श्री सद्गुरु की कृपा बिना प्राप्त नही होता । जिसका आत्मा शुद्ध और पवित्र होता है उस ही को यह प्राप्त होता है । 'भावना भवनासणी' इसलिये मरते समय शुद्ध भाव आ जाता है, उसके भव का अन्त हो जाता है । बहिन श्री का आत्मा शुद्ध और पवित्र था । 'सोही उज्जुयभूयस्स, धम्मो सुद्धस्स चिट्ठइ' (उत्तराध्ययन—तीसरा अध्ययन) हे गौतम ! जिसका आत्मा शुद्ध और पवित्र होता है उसीमें मेरा धर्म रहता है । गीताजी में भी कहा है—यदि मरण समय थोडी भी शान्ति प्राप्त हो जाय तो समाधि मरण होता है । जैसे कोई दिन भर घर या दूकान का काम करता रहे पर रेलगाडी छूटने के ठीक समय पर स्टेशन पर हाज़िर हो

जाय तो वह गाड़ी में बैठ जाता है पर यदि कोई दिन भर स्टेशन पर हाजिर रहे पर गाड़ी छूटने के समय बाहर चला जाय तो वह गाड़ी चूक जाता है। इसी प्रकार यदि मृत्यु के अन्त समय शान्ति समाधि प्राप्त हो जाय तो अवश्य समाधिमरण होता है।

ली० सेठ मंगलदास c/o सेठ देवजी
कच्छ-भुजपर
टोकरशी की कं० आरछाबाजार बम्बई नं० ९

संसार की महान् विभूति

जगद्गुरु महान् योगीन्द्र विजयशान्ति सूरीश्वरजी महाराज अभी मारवाड़ में सरस्वती अरण्य में विराजते हैं। वहाँ एक दिन एक गृहस्थ ने एक हजार मनुष्यों को आमंत्रित किया था। किन्तु वहाँ पाँच हजार मनुष्यों के एकत्रित हो जाने से भोजन बनाने वाले चिन्तित होने लगे। योगिराज ने उन्हें विश्वास दिलाया कि तैयार किया हुआ भोजन जितने आवेंगे उन सभी के लिये पर्याप्त होगा। इस प्रकार पाँच हजार मनुष्यों के भोजन कर लेने के बाद भी और पाँच सौ आदमी खाय कर जायें इतना सामान बढ़ा।

(साप्ताहिक गुजराती पंच अहमदाबाद ता ९-१-१९२९)

A MODERN MIRACLE-WORKER

His Holiness Yogiraj Jagatguru Acharya Samrat Shree Shanti Vijaysurishwarji Maharaj is at present at Saraswati Aranya, in Marwar, once a lonely little village of the beaten track, but now almost a township thronged with people of all creeds who have come to pay their humble respects to the Saint.

His Holiness is said to have performed many miracles On one occasion, it is said, a rich merchant who came for Gurudeo's Darshan invited about 1000 people to a feast, but on that day, unexpectedly, about 5000 people gathered to obtain the saint's blessings and the post was in a quantary as and how to provide them with food But His Holiness bade him not to be purturbed and when the time came to distribute food, it was found that there was not only enough for all but also enough to feed 500 more was left over

STATESMAN CALCUTTA
Tuesday, January 7, 1936

सवत् १९९१ की साल में वैशाख महीने सारणपुरा (मारवाड) के समीप वीसलपुर गांव में प्रतिष्ठा महोत्सव था। आसपास के गांवो के मिलाकर चालीस हज़ार से ऊपर लोग इकट्ठे हुए थें। जगतगुरु आचार्य भगवान् उस समय वीसलपुर पधारे हुए थे। चालीस हज़ार से अधिक सख्या वाले इस जनसमूह के लिये आवश्यक जल का प्रबन्ध करने का कोई साधन न था। मारवाड जैसे प्रदेश और गर्मी के दिनो में पानी का कैसे प्रबन्ध किया जाय ? इस सम्बन्ध में गांव के लोग बहुत चिन्तित थे। परन्तु जगद्गुरु आचार्य भगवान् की अद्भुत आत्मशक्ति और लब्धि के प्रताप से पानी के प्राकृतिक झरने फूट पडे और जल धारा बह निकली।

आठ दिन तक अनगिनते हज़ारो आदमी इकट्ठे हुए। परन्तु भोजन अथवा पानी की किसी भी दिन कमी न पडी। जगतगुरु आचार्य भगवान्

की शक्ति के प्रताप से खूब आनन्द मंगल रहा। प्रतिष्ठा महोत्सव के शुभ दिवस एकत्रित हुए मारवाड़ के श्री संघ कॉन्फ्रेन्स तथा देश-परदेश से आये हुए प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने मिलकर जगद्गुरु आचार्य भगवान् को 'युगप्रधान' पदवी से विभूषित किया। इनमें कलकत्ता के सुप्रसिद्ध धर्मी धार दानवीर सेठ जगतसिंहजी जिनके कुटुम्ब में वर्षों से जगत सेठ की पदवी चली आती है अपने परिवार के साथ इस शुभ अवसर पर पधारे थे। इनके सिवा कितनेक राजकुमार तथा जोधपुर स्टेट के [illegible] अफसरों के साथ असंख्य जन-समुदाय उमड़ पड़ा था। उस समय का दृश्य बड़ा अलौकिक था उसकी दिव्यता की कल्पना वही कर सकता है जिसने उस आँखों देखा है।

(इलाहाबाद लीडर पत्र ता॰ १४—७—१९३४ का अंग्रेजी अनुवाद)

We have received the following for publication from a correspondent.

Mysterious supply of food and water.

It was a remarkable event in the history of Jainism when several thousand Jains and non-Jains including some recognised leaders of the Jain community attended religious ceremonies held at Bishalpur, Marwar, Erinpura Road, B B & C. I Ry under the august guidance of His Holiness Vishwopkari the Blessed Yogiraj Acharya Samrat Jagatguru Yogindra Chudamani Shree Shanti Vijayasurishwarji Maharaj of Mount Abu fame There is scarcity of water every year during the summer season in the small village of Bishalpur and on the eve of the ceremony

the people of Bishalpur naturally felt anxious as they could not see any means by which the problem of supplying water to such a vast gathering could be solved and in their anxious moments they approached Shree Gurudeoji Bhagwan His Holiness assured them that they should not worry about the matter In fact, when His Holiness arrived at Bishalpur, the water trouble completely vanished and an inexhaustible supply of water suddenly appeared even in those places where there was no chance of getting water Plentiful supply of water was available at Bishalpur till the ceremony lasted Further, on several occasions the supply of cooked food, which was considered to be insufficient for the needs of a large number of visitors who arrived unexpectedly, was found to be more than sufficient Everyone had to believe that the supply was increased by unseen hands Before the Jagatguru left Bishalpur, the entire assembly, headed by the Jagat-Seth from Murshidabad, conferred on him the Highest religious honour of Jainism, the great title of "Yuga Pradhan"

ALLAHABAD LEADER,
Monday July 15, 1935

श्री आचार्य भगवान् आबू में विराजते थे उस समय आपने अहमदाबाद में दर्शन दिये ।

समाधिमरण की तैयारी

आचार्य श्री विजय केशर सूरीश्वरजी महाराज को श्रावण सुदी ११ को दोपहर बाद विस्तर (सन्धा) में दस्त होने लगे और तीन दिन बाद खून के दस्त शुरू हो गये। इससे सभी चिन्तित हो गये। आत्मशान्ति के लिये प्रत्याख्यान व्रत लेकर उपवास आप वगैरह करने लगे। आपकी यह प्रबल इच्छा थी कि किसी के साथ वैर-विरोध न रह जाय अतः आप बार बार संघ को खमाने लगे। पंचमी के दिन दस्त बन्द हो गये। इसलिये सुबह के पहर आचार्य श्री ने बतलाया कि आज मेरे चारों आहार का प्रत्याख्यान है। आबूजी से योगिराज श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी महाराज मुझे कह गये हैं। यहाँ श्री देवविजयजी ने पूछा कि क्या आप बतावेंगे कि वे क्या कह गये हैं? प्रत्युत्तर में आपने बतलाया कि जो कह गये हैं वह मैं जानता हूँ।

मुझे योगिराज आबू से सूचना कर गये हैं इसलिये मैं आज तैयार होकर बैठा हूँ। अब मैं यहाँ थोड़े घंटों का ही मेहमान हूँ।

इसलिये अब तुम तैयारी करो। समय पूरा होने आया है। ऐसे हृदय-विदारक शब्द सुनकर पंडित श्री लाभविजयजी ने फिर पूछा— *स्वामिन्! सभी तैयार ही हैं।* आचार्य श्री ने पुनः बतलाया कि जब मैं मारवाड़ में था तब मैंने योगिराज श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी महाराज से कहा था कि अन्तिम समय में मेरी खबर लेना। उसी के अनुसार वे मुझे सावधान कर गये हैं। इस समय उनकी आँखें और चेहरा खूब लाल हो गये और तेज कम होता हुआ मालूम होने लगा। सीधे बैठकर बातें करते थे सो बन्द कर मस्तक झुकाकर बैठने लगे।

इस अन्त समय में आचार्य श्री विजयनेमि सूरीश्वरजी आचार्य श्री विजयोदय सूरि तथा आचार्य श्री सागरानन्द सूरि वगैरह अन्तिम मिलाप के लिये आ पहुँचे।

इसके बाद आचार्य श्री विजयसिद्धि सूरि तथा सेठ साराभाई डाह्याभाई और कस्तूरभाई लालभाई आये तब पुन सहज ही मस्तक उठाकर सामने देखा और हाथ जोडे। आजका दृस्य सभी को जुदा ही प्रतीत हुआ। इसलिए आचार्य श्री का सकल परिवार महो० श्री देवविजयजी, प्रखर पडित श्री लाभविजयजी वगैरह पचास साधु साध्वी हाजिर थे और बार बार नमस्कार मत्र का स्मरण कराते थे। इसी तरह दो दो घटो के बीच बीच में अनशन कराया जाता था। अन्त समय की अपूर्व शान्ति थी। लगभग छ बजे अन्त समय का मृत्युकालीन श्वास शुरू हुआ। सभी को ऐसा प्रतीत हुआ कि अब श्वास बदला है। यह आत्मा थोडे समय में ही इस देह रूप पिजरे से स्वतन्त्र होने वाला है। श्रावको में से नगरसेठ विमलभाई मयाभाई, साराभाई मयाभाई तथा उनकी मातु श्री मुक्ताबहिन भी बार बार खबर लेने के लिए आने लगे।

श्रावण वदी पाँच की सन्ध्या को ठीक छः बजकर पैंतीस मिनिट पर गर्दन ऊँची कर सीधे ध्यानावस्था में बैठे और पौने सात बजे अन्तिम श्वास की दो हिचकी ली और तीसरी हिचकी के साथ उनकी अजर अमर आत्मा, हजारो लोगो को शोक ग्रस्त कर, यह देह पिजर छोड गया। आखिर यह तेजस्वी तारा खिर गया। दुनिया में व्यक्ति की आवश्यकता उसके होते हुए शायद कम भी मालूम हो पर उसके अभाव में उसकी क़ीमत का खरा अन्दाज लगता है। उसकी कमी कभी पूरी नही होती। इस शासनस्तम्भ के चले जाने पर उसकी कमी को पूर्ण करना कठिन था। हजारो भव्यात्माओ को उपदेश देकर धर्म मार्ग में प्रेरित करने वाले ऐसे आचार्य श्री की यह मृत्यु जैन-समाज के लिये महा दुःखरूप थी।

(उपरोक्त लेख—श्री बृहत् जीवन प्रभा तथा आत्मोन्नति वचनामृत नामक पुस्तक में से लिया गया है। पृष्ठ ३५२। लेखक—देवविनोद आदि अनेक ग्रथो के कर्त्ता आचार्य देव श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी

महाराज)पुस्तक का प्राप्ति स्थान—शा. सधुभाई तलकचन्द रतनपोल में वाघणपोल अहमदाबाद।

श्री उमेदपुर नगर में अंजनशलाका व प्रतिष्ठा महोत्सव निमित्त 'श्री संघ आमंत्रण पत्रिका' में से लिये हुए उद्गार—

वीर संवत् २४६४ विक्रम संवत् १९९५ मगसिर वदी ७ सोमवार ता. १४–११–१९३८

हमारे सद्भाग्य से तीन इंच ऊँची श्री अमीझरा उमेद पूरण पार्श्वनाथ भगवान् के सहस्रफणा और अति आकर्षक बिम्ब की अंजनशलाका विक्रम सं. १९९१ की माघ सुदी पंचमी के दिन पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय अनन्त वन्दनीय जगतगुरु अनन्तजीव प्रतिपाल राजराजेश्वर, योग लब्धि सम्पन्न योगीन्द्र चूड़ामणि आचार्य भगवान् श्री श्री श्री १००८ श्री श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी महान् योगिराज के पवित्र कर कमलों से श्री बामणवाडजी तीर्थ में हुई थी। उस समय आप श्री के आशीर्वाद के अनुसार श्याम प्रतिमाजी के स्थान स्थान पर अंजनशलाका के पूर्व जो छींटे थे वे मिट गये और नेत्रों से अमी झरती हुई देखने में आई है। ऐसे *महाप्रतापी जिन बिम्ब को नूतन श्री जिन चैत्य में सिंहासन पर विराजमान* करने की तथा नूतन श्री जिन बिम्बों के अंजनशलाका की महत्वशाली क्रियाएँ इन्हीं परमपूज्य महान् योगिराज के पवित्र कर कमलों से होगी।

ली. ४८ गामों के पंचों की सही मु. श्री उमेदपुर
जैन बालाश्रम उमेदपुर, वाया-एरनपुर

आबू में विराजते हुए जगतगुरु आचार्य सम्राट् श्री १००८, श्री विजयशान्तिसूरीश्वरजी महाराज ने हैदराबाद सिन्ध में अपने एक भक्त को अग्निदाह से बचाया।

संवत् १९९१ भाद्रपद कृष्ण ५ को स्वर्गीय योगनिष्ठ महात्मा आचार्य श्रीविजयकेसरसूरीश्वरजी महाराज की जयंति हैदराबाद (सींध) के प्रसिद्ध

धनकुबेर सुविख्यात पहुमल ब्रधर्स नामी फर्म के मालिक सेठ कीशनचंदजी पहुमल की अध्यक्षता में बडे समारोह के साथ मनाई गई।

आपने अपने भाषण में अपने अनुभव का एक उदाहरण दिया और कहा कि मै अपने निवास स्थान पर आराम से सो रहा था। रात्रि को अचानक इलेक्ट्रिक वायरींग में आग लग गई। मैं गम्भीर निद्रा में मग्न था, मुझे आग लगने की वात कुछ भी मालूम नही पडी थी, एकाएक आचार्य भगवान् ने दर्शन देते हुए मुझको चिताया कि उठो तुम्हारे घर में आग लग गई है यह सन्देश सुना तो मै घवरा कर उठा, आग लगती हुई देखी। गुरुदेव भगवान् की कृपा से मेरे तथा अन्य वहुत से नर नारियो और वच्चो के प्राण वच गये। मैंने श्री गुरुदेव भगवान् से कहा कि आपने जीवन दान दिया। श्री गुरुदेव वोले तुम अनन्य भक्त हो।

पश्चात् सेठ साहेव ने कहा कि जिसको समाधि मरण होता है वह अवश्यमेव उच्च गति को प्राप्त होता है। इस वात का प्रत्यक्ष प्रमाण हमने "श्री वृहत् जीवन प्रभा" के पृष्ट ३५२-३५३ मे पाया है।

एक समय केसरविजयजी ने गुरुदेव भगवान् को फरमाया कि यह जीव तो अनादि काल से फिर रहा है। अगर समाधि मरण हो जाय तो कल्याण हो जाय, इसलिये अन्तिम समय में आप हमारी खवर जरूर लीजियेगा क्योकि जिसका अन्त सुधरा उसका भव का फेरा मिट जाता है।

आबू में विराजते हुए हमारे पूज्यवर श्री गुरुदेव भगवान् ने अहमदावाद में विराजते हुए योगनिष्ठ महात्मा श्री विजयकेसर सूरिजी महाराज को उनके देहावसान की सूचना दी कि आपका अन्तिम समय आ गया है, समाधि मडित मरण करो। आचार्य श्री ने इस सन्देश के प्राप्त होने के साथ अपने अन्तिम समय की तैयारी की और ध्यानस्थ अवस्था में देह त्याग किया।

(ऊपर का लेख श्री हैदरावाद वुलेटीन ता० १०–१०–१९३६ के अंग्रेजी अखबार में से लिया गया है। ठि० सिकन्दरावाद, दक्षिण)

How His Holiness Jagat Guru Acharya Sammat 1008, Shree Bijay Shanti Surishwarji Bhagwan while staying at Abu had saved one of His disciples from burning by fire at Hyderabad (Sindh)

"On the fifth day afet the Full Moon in the month of Bhadrapada in Sambat 1993 the anniver sary Jubilee of the late Yogi Mahatma Acharya Shree Bijay Keshar Surishwarji Maharaj was celebrated with great pomp under the aegis of Seth Kishanchandji Pohumal, proprietor of the reputed well-established firm under the style of Messrs. Pohumal Bros Citing an example of his own experience he said in course of his speech, "I was sleeping comfortably in my own home. At night the electric wire suddenly caught fire while I was fast asleep fully unaware of the electric conflagra tion. All of a sudden Shree Acharya Bhagwan made His appearance before me and roused me up from my sleep saying, Get up your house is on fire. At this I rose up in confusion and saw the fire Through the grace of Guru Deva Bhagwan the lives of myself and many other men, women and children were saved. I said to Bhagwan Gurudeva, 'You have given me my life, at which He replied, 'You are my steadfast disciple. "

Later on Seth Sahib had said, "He who dies

in a reverie must have attained spiritual greatness. I have had glowing examples of this in Shree Brihat Jiwan Prava at pages 352-353"

Once Keshar Bijayji had said to Gurudeva, "This created being is in existence since the beginning of creation If death in a reverie is attained it would mean a great blessing So at the time of my death do please inquire about me since it is a fact that whosoever is chastened at the end must escape from the cycles of birth and re-birth"

"While staying at Abu our Pujya Shree Gurudeva Bhagwan had intimated to Yogi Mahatma Shree Bijay Keshar Suriji at Ahmedabad the previous indication of the latter's demise and informed him that his last day had drawn near and so asked him to prepare for death in a reverie Immediately on receipt of this information Acharya Shreeji made a preparation for his last moment and breathed his last even while he was in a reverie"

गुरुदेव गुरु भगवान् हैं। आध्यात्मिक गुरु हैं।

(नीला क्राम कूक, ली फरमेन, इन्क, न्यूयोर्क, द्वारा लिखित My Road to India नामक पुस्तक के १७० पृष्ठ पर)

"My Road to India"

By

Nilla Cram Cook

On Page 170 Lee Furman, Inc

New York.

"Gurudeo is Guru God Divine Guru."

Illustrated weekly आदि कई अंग्रेजी पत्रों में श्री गुरुदेव भगवान् महायोगिराज जगद्गुरु आचार्य सम्राट महाराज साहेब के फ्रोटो के साथ पुर्तगाल निवासी दार्शनिक एवं अन्वेषक डा० जोस रोड्रिगेस द्वारा लिखित यह लेख प्रकाशित हुआ। यही लेख दुबारा दैनिक नवयुग (हिन्दी) दिल्ली के ता० १२ जुलाई १९५५ के अंक में प्रकाशित हुआ— महान् योगिराज श्री आचार्य सम्राट् जगद्गुरु श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी महाराज योग संस्कृति के तात्विक विद्वानों में से एक है। योग के अनुगामी प्राकृतिक नियमों द्वारा अद्भुत वस्तुएँ उत्पन्न कर सकते हैं जिन्हें साधारण लोग जादू समझते हैं। किन्तु वास्तव में वे जादू से उत्पन्न नहीं होती।

योग की शक्ति द्वारा असम्भव बातें सम्भव की जा सकती हैं। आगे चलकर पुर्तगाल निवासी महाशय लिखते हैं—

अतएव मैं प्रसन्नता पूर्वक अपने सभी प्रिय साथी मित्रों एवं अन्वेषकों का ध्यान इस ओर आकृष्ट करता हूँ कि श्री योगिराज के भक्तिपूर्वक दर्शन करने एवं उनका अनुग्रह प्राप्त करने से विश्व में सर्वत्र यात्रा करने के उनके सही उद्देश्य केवल इसी एक स्थान पर सिद्ध हो जायेंगे।

'जैनध्वजा' अजमेर

१५-१२-५५

In certain English Newspapers such as the illustrated weekly with a photo of Shree Gurudeo Bhagwan Greatest Yogiraj Jagatguru Acharya Samrat Maharaj Sahib as written by Dr Jose Rodrigues the Portugese Philosopher and explorer It was again published in Daily Nava Yug (Hindi) of Delhi dated 12th July 1955

"Greatest Yogiraj Shree Acharya Samrat Jagatguru Shree Vijay Shanti Surishwarji Maharaj is one of the true scholars of Yoga culture Follo-wers of Yoga can produce, by natural laws, phenomena which the initiated people believe to be magic, but actually these are not by magic

Impossible things can be made possible by the powers of Yoga Further the Portugese Gentleman says —

"I therefore gladly draw the attention of all my dear friend-travellers and explorers that by seeing with devotion and attaining the benevolence of Shree Yogiraj, all their motto of travelling around the world will be served at this place only"

JAIN DHWAJA, AJMER
16-12-36

"TANTRIK YOGA" (HINDU & TIBATAN)

By

J Marques-Riviere, Member of the Asiatic Society

Publisher Rider & Co
Paternoster House, Paternoster Row
London, E C 4

TO MY GURU,

"I wish to dedicate this first volume of the "Asia" series to Guru Shree Vijay Shanti Surishwarji

Maharaj whom I met in India and who gave me peace.

Defination of self realisation.

In most obedient respect,

April, 1940 J. M. Riviere

हिन्दू और तिब्बत का तान्त्रिक योग लेखक—जे मारसेल राइवीरे, सदस्य एशियाटिक सोसाइटी प्रकाशक—राइडर एण्ड कम्पनी पेटर नोस्टर हाउस पेटर नौस्टर रो, लन्दन ई सी ४ का समर्पणपत्र।

मेरे गुरु की सेवा में

'एशिया' ग्रन्थमाला के इस प्रथम भाग को मैं गुरु श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी महाराज को समर्पित करना चाहता हूँ। भारत में मैंने आपके दर्शन किये और मुझे आपसे शान्ति प्राप्त हुई।

आत्मज्ञान की व्याख्या।

अत्यधिक विनम्रभाव से सम्मान के साथ

एप्रिल १९४० जे एम राइवीरे

आचार्य देव की स्तुति

(रचयित्री—परम विदुषी, प्रखर पडिता श्री हीराकुंवर बहिन, न्यायतीर्थ, व्याकरणतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, साख्यतीर्थ, कलकत्ता)

त्रोटकवृत्तम्

समतारस धाम ! गुरो ! समता, विदधातु सदा मम चित्तकजे ।
तम सशय नाशनभानुसम, गुरुशान्ति मुनीश ! जयोऽस्तु सदा ॥१॥

अर्थ—समता रस के धाम हे गुरुदेव ! मेरे चित्त रूपी कमल में समता भाव उत्पन्न करिये । हे गुरुदेव ! शान्ति मुनीश्वर ! आप सशय रूप अन्धकार को हटाने में सूर्य सदृश हैं । हे भगवन् ! आपकी सदा जय हो ।

समशान्तसुधारस भावमय, जगताप विनाशन मेघ समम् ।
जन दुःखहर मधुर सुखद, जग पूजित देव ! तवोऽस्ति वचः ॥२॥

अर्थ—विश्वपूज्य हे गुरुदेव ! समभाव एव शान्तिप्रधान आपका वचन सुधारस रूप है एव भावमय है । जगत के ताप को शान्त करने में वह मेघ के समान है । वह मनुष्यो के दुःख दूर करने वाला है, मधुर है और सुख का देने वाला है ।

भवरोगलय शिवशान्तिकर, भयशोकशम यशहर्षप्रदम् ।
भुवनार्त्तिहर जनकामभर, जगपूज्य सदा तव भक्ति रसम् ॥३॥

अर्थ—जगत् के पूज्य हे गुरु भगवन् ! आपका भक्तिरस ससार रूप रोग का नाश करने वाला और शान्ति एव कल्याण का देने वाला है । इसके प्रभाव से भय और शोक का शमन हो जाता है एव यश तथा हर्ष

की प्राप्ति होती है। यह संसार के दुःख का हरण करने वाला है एवं भक्त की कामना को पूरी करता है।

भवतारक ! तापितशान्तिकर ! शरणागतपालक ! शान्तिगुरो ।
कमलोपम कोमल पादयुगे सकलार्पितभक्तजना प्रमुदा ॥४॥

अर्थ—भवतारक संतप्त प्राणियों को शान्ति देने वाले शरणागत की रक्षा करने वाले हे शान्ति गुरुदेव ! आपके कमल जैसे सुकोमल चरणों में भक्त लोग आनन्दपूर्वक अपना सर्वस्व अर्पण करते हैं।

वसन्ततिलकावृत्तम्

अज्ञानतामसमपाकरणे प्रदीप !
संसारपारकरणे मम पोततुल्य !
भक्तेप्सितप्रदाने सुरवृक्ष ! नौमि
सूरीश ! शान्तिगुरुदेव, तवांघ्रिपद्मे ॥५॥

अर्थ—अज्ञानान्धकार को दूर करने में दीपक स्वरूप हे गुरुदेव ! संसार से मुझे पार पहुँचाने के लिये आप जहाज समान हैं। भक्तों की मनोकामना पूर्ण करने में कल्प वृक्ष रूप हे सूरीश्वर ! हे शान्ति गुरुवर ! मैं आपके चरण कमलों में नमस्कार करती हूँ।

शिखरिणी वृत्तम्

सदा विश्वप्रेमी वितरति मुदा प्रेमसुधया ।
जनानां तप्तानां शमयति मुखसंतापदहनम् ॥
सुपुण्यां मांगल्यां चरणयुगलीं भक्तिसहितम् ।
प्रभोः सम्राट् शान्तेर्भवतु भवतां हीरवमति ॥६॥

अर्थ—हे गुरुदेव आप विश्वप्रेमी हैं। सदा आनन्दपूर्वक प्रेमामृत का वितरण करते हैं। त्रिविध ताप से जलते हुए लोगों के तापरूप अग्नि को आप शान्त कर रहे हैं। हे सूरि सम्राट ! शान्ति गुरुदेव ! सुपुरी

माडोली के मध्य, आपके पावन चरण कमलो मे हीरा बहिन भक्ति पूर्वक शतश नमस्कार करती है।

गुरु स्तुति.

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वर ।
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नम ॥१॥

अर्थ—गुरु ब्रह्मा है, गुरु विष्णु है और गुरु ही महादेव है। साक्षात् परब्रह्म भी गुरुदेव ही है। ऐसे श्री गुरुदेव को नमस्कार हो।

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाजनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलित येन तस्मै श्रीगुरवे नम ॥२॥

अर्थ—ज्ञान रूपी अजन की शलाका द्वारा जिसने अज्ञान तम से अन्धे बने हुए की आँख खोल दी ऐसे श्री सद्‌गुरु को नमस्कार हो।

स्थावर जगम व्याप्तं यत्किंचित् सचराचरम् ।
त्व पद दर्शित येन तस्मै श्री गुरवे नम ॥

अर्थ—स्थावर और जगम जीवो से व्याप्त जो यह चराचर जगत् है उसको जिसने त्व पद अर्थात् आत्मा रूप से दिखलाया ऐसे श्री गुरु भगवान् को नमस्कार हो।

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्त येन चराचरम् ।
तत्पद दर्शित येन तस्मै श्री गुरवे नम ॥

अर्थ—जो ज्ञान रूप से अखण्ड मण्डलाकार चराचर जगत् मे व्याप्त है उसके (परमेश्वर के) स्थान को अर्थात् मुक्ति पद को जिसने बतलाया ऐसे श्री गुरुदेव को नमस्कार हो।

चिन्मय व्यापित सर्वं त्रैलोक्य सचराचरम् ।
असि पद दर्शित येन तस्मै श्री गुरवे नम ॥

अर्थ—सचराचर अखिल त्रिलोकी में जो ज्ञान रूप से व्याप्त है ऐसे असि पद रूप परमात्मस्वरूप का जिसने दर्शन कराया ऐसे श्री सद्गुरु को नमस्कार हो।

निर्गुणं निर्मलं शान्तं जङ्गमं स्थिरमेव च।
व्याप्तं येन जगत्सर्वं तस्मै श्री गुरवे नमः॥

अर्थ—निर्गुण, निर्मल शान्ति स्वरूप परमात्म तत्व को जिससे सारा स्थावर और जंगम जगत व्याप्त है, दिखलाने वाले श्री गुरुदेव को नमस्कार हो।

विषय-सूची

प्रथम पंक्ति

प्रथम पंक्ति	पृष्ठ
७२ दर्शन कर सब दुख टल जाएँ	१०४
७३ आओ शांति प्यारे	१०५
७४ सकल विश्व में नाम तुम्हारा	१ ६
७५ मम आशा आये सिद्ध भई	१ ६
७६ जय जय परवेसा	१ ७
७७ नमो भवि मंत्र बड़ो नवकार	१ ८
७८ नमो मन धार मंत्र नवकार	१ ९

स्तवन-कुंज

काठियावाडस्थ श्री स्थानकवासी लीम्बडी सम्प्रदाय के प्रसिद्ध
वक्ता व्याख्यान दिवाकर पूज्य श्री नानचद्रजी
महाराज साहेब द्वारा बनाये हुए भजन

(१)

श्री सद्गुरु प्रार्थना पद

(हरि गीत)

हे नाथ ग्रही अम हाथ रहीने, साथ मार्ग बतावजो ।
न भूलिये कदी कष्टमां पण, पाठ एह पढ़ावजो ॥
प्रभो असत आचरता गणी, निज बाल सत्य सुणावजो ।
अन्याय पाप अधर्म न गमे, स्वरूप ए समझावजो ॥
वगडे न बुद्धि कुटिल कार्ये, बोध एह बतावजो ।
विभू-जाणवानो अजब रीते, जरूर जरूर जणावजो ॥
सहु दूषित व्यवहारो थकी दीन-बन्धु दूर रखावजो ।
छे याचना अम कर थकी, सत्कार्य नित्य करावजो ॥
विभू सत्य न्याय दया विनय जल हृदय मा वरसावजो ।
बदनाम काम हराम थाय न, टेक एह रखावजो ॥
हे देव ना पण देव ! अम उर प्रेम पूर वहावजो ।
पापाचरण नी पापवृत्ति हे दयाल ! हटावजो ॥
सुख सम्य सज्जनता विनय यश रस अधिक विस्तारजो ।
सेवा धर्म ना शोख अम अणु अणु विषे उमरावजो ॥
शुभ सन्त शिष्य सदाय श्रेयो एह विवेक वधारजो ।
आनन्द मगल अर्पवानी अर्ज ने अवधारजो ॥
ओ शान्ति ! ओ शान्ति !! ओ शान्ति !!!

(२)

राजस्त

जगत मां शान्ति करवाने।
जगत में जीव बचाने।।
नई सीख प्रभुजी नो
अवनि मां शान्ति अवतरिया ॥१॥

भूलेला मार्ग बतलाया।
शान्ति ना मूल समझाया॥
अहिंसा औषधि पाया।
अवनि मां शान्ति अवतरिया ॥२॥

बच्चा छे वेर मे जोरो।
अनाचारी बहु जागी॥
नयन नी न्याय निरखाया।
अवनि मां शान्ति अवतरिया ॥३॥

धर्म ना नाम ना झगड़ा।
परस्पर द्वेष ना रगड़ा॥
कला नी कायदा मारे।
अवनि मां शान्ति अवतरिया ॥४॥

महामुमुक्षुओ सेवी।
वीरता राजवी वेवी॥
बतावा जगत मे बाते।
अवनि मां शान्ति अवतरिया ॥५॥

जीवनु केम आ जग मा ।
सहे केम प्रेम रग रग मां ॥
भणावा प्रेम ना पाठो ।
अवनि मा शान्ति अवतरिया ॥६॥

भणावा शान्ति ना पाठो, अवनि मा शान्ति अवतरिया ॥
—सतशिष्य नानचद्रजी महाराज

(३)

राग भीम पलाश

क्यां मलशे हुवे क्या मलशे ए सतशिरोमणि क्या मलशे ॥
जे शान्त रसे थी भरीया छे, गुरु दया क्षमा ना दरिया छे ।
जे शान्ति पद मां ठारिया छे, ए शान्ति सूरीश्वर क्यां मलशे ॥१।
दुःख सहेवा मां पृथ्वी जेवा, जल वृक्षो जेम करे सेवा ।
एने पर दुःख हरवा ना हेवा, ए सन्त शिरोमणि क्या मलशे ॥२॥
पापी ना पाप तजावे छे, नित्य ज्ञान जले नवरावे छे ।
शान्ति ना पाठ पढ़ावे छे, ए सन्त शिरोमणि क्या मलशे ॥३॥
जे, अखूट शान्ति ना धरनारा, उद्धार अधमनो करनारा ।
दलितो ना दुःख ने दरनारा, ए सन्त शिरोमणि क्यां मलशे ॥४॥
आशा न थी अन्य तणी करता, डूब्या ने करी दे छे तरता ।
अमृत मुख थी रहे छे झरता, ऐ शान्ति सूरीश्वर क्यां मलशे ॥५॥
सहु जीवो ने निज सम जाणे छे, निज पर ना पापो टारे (टाणे) छे ।
सन्त शिष्य शान्ति ने चाहे छे, ए जगत गुरु हुवे क्यां मलशे ॥६॥
—कविवर्य नानचद्रजी महाराज साहेब

(५)

राग—आशा

आ दिवसो छे अन्तर घट ना ।
भेद तजो तजी ने खमवाना ॥ आ० ॥१॥
आज सुधी नथी नम्र थया त्या ।
नम्र बनी दिन छे नमवाना ॥ आ० ॥२॥
श्रवण मन नथी शुद्ध करेला ।
हृदय तणा पट मां रमवाना ॥ आ० ॥३॥
उत्तम मा उत्तम आ दिवसो ।
वैर विरोध विषय वमवाना ॥ आ० ॥४॥
सर्व जीवो ने मित्र बनावी ।
दिल ना दुश्मन छे दमवाना ॥ आ० ॥५॥
सन्त शिष्य जे सरल सुबोधी ।
ए गुणी जन प्रभु ने गमवाना ॥ आ० ॥६॥

—कविवर्य नानचंद्रजी महाराज साहेब

(६)

राग—हृदय मन्दिर एनुं रलिया मणुं रे

दयादृष्टि गुरुवर दास पर राखजो रे ,
नम्र विनती करु छु बारम्बार । दयादृष्टि० ॥१॥
प्रभु वेद तणा भेद नथी जाणतो रे ,
नथी जाणतो स्वरोदय नो सार । दयादृष्टि० ॥२॥

मने मम नियम आसन आवड़े नहीं रे
नथी विहता मरेला विचार । दयामृन्ति० ॥३॥

क्रिया कांड मां हुं कई समजुं नहीं रे
पुस्त वेश तो न हुं । भजनार । दयामृन्ति ॥४॥

जाप भजन विना अन्य आवड़े नहीं रे
निराधार ना आसन छो आधार । दयामृन्ति ॥५॥

षट् षट् शास्त्र ने सिद्धान्त नथी जाण्यो रे
सदा आपनुं स्मरण करनार । दयामृन्ति ॥६॥

जाप विना मने खबर नथी आमरी रे
संत शिष्य तणा हृदय वसनार । दयामृन्ति ॥७॥

—कविवर्य नानचंदजी महाराज साहेब

(७)

राग—भीमपलास

श्री शान्ति गुरु के चरणों में
नित उठ शीश नमाता हूँ।
मेरे मन की कलि खिल जाती है
जब दर्श गुरु का पाता हूँ ॥१॥ टेर

मुझे शान्ति नाम ही प्यारा है
इस ही का मुझे सहारा है।
इस नाम में ऐसी बरकत है
जो चाहता हूँ सो पाता हूँ ॥२॥

जब याद तेरे गुण आते है
दुःख दर्द सभी मिट जाते है।
मै बनकर मस्त दीवाना फिर
बस गीत तेरे ही गाता हूँ ॥३॥
गुरुराज तपस्वी महायोगी
शिर तार हो तुम महाराजों के।
मै एक छोटा सा सेवक हूँ
कुछ कहता हुआ शर्माता हूँ ॥४॥
गुरु-चरणों मे है अर्ज यही
बढ़ती दिन रात रहे भक्ति।
मेरा मानुष जनम सफल होवे
यही भक्ति का फल चाहता हूँ ॥५॥

—कविवर्य नानचद्रजी महाराज साहेब

(८)

राग—धनाश्री

सतसंग थी सुख थाय, जीवन मा सतसग थी सुख थाय।
सतसग थी सुविचारो उपजे
मन मा शान्ति जणाय। जीवन मां० ॥१॥
सतसगी नी प्रियकर वाणी।
सुणतां पाप पलाय। जीवन मां० ॥२॥
धर्माधर्म ना मर्म सहज मा
सतसगे समझाय। जीवन मां० ॥३॥
आवे विनय विवेक सुविद्या
मले शिवपद सुख धाम॥ जीवन मा० ॥४॥

एरी सखी ओ दिन कब आवे।
बातें करे कछु अरस परस की ।। तरस० ।।३।।
गुरु चरनन में पीयुष बरसे।
प्यास बुझे सखी चरन परस की ।। तरस० ।।४।।
बरसत नैना थरकत बैना।
हद न रहे जभी हिये में हरष की ।। तरस० ।।५।।

(१)

राग—नागर वेलीओ रोपाव

तुमने लळी लळी लागु पाय, दर्शन आपोने भगवान,
तुमने पडी पडी लागु पाय, दर्शन आपोने भगवान।
तुमारा दर्शन करवा काज, भक्तो आव्या छे वहु साथ जो।
तुमने फरी फरी लागु पाय, दर्शन आपोने गुरु राय।
तुमारी शांत मुद्रा जोइ, हमारा पाप नाखे धोइ जो,
तुमने वळी वळी लागु पाय, दर्शन आपोने भगवान।
तुमारी प्रेम मूर्ति जोइ, हमारु मनडु जाय मोही जो,
तमने वदन वारवार, दर्शन आपोने भगवान।
मुख दीठे सुख उपजे, दर्शने अति आनद जो,
तमने वदन कोटी हजार, दर्शन आपोने भगवान।
तु गति तु मति आशरो, हम हैयाना हार जो,
हम भक्तोना छो प्राण, दर्शन आपोने भगवान।
तुम मूर्तिने निरखवा, हम नयनो वहु तलसे जो,
हम पर कृपा करो भगवान, दर्शन आपोने भगवान।
पचम काले पामवो, दुर्लभ तुम दीदार जो,
तुम दर्शन थी दुःख जाय, दर्शन आपोने भगवान।

गुर देसावर की ममो भाव्या महिमा पुची तुमारी की
तुमारो महिमा अपरंपार, दर्शन आपोने भगवान।
सत्य भक्ति की गुरु गुन गावए, करतो जन्म सुधारवां को
भक्ति देवो अपरंपार, दर्शन आपोने भगवान।

—रचयिता संत विपु

(२)

राग—कव्वाली

शांति गुरु श्री प्यारे, चरणों में शीश नवाऊँ।
मैं भक्ति भेंट अपनी तेरी शरण में लाऊँ।
माथे पै तू ही चंदन छाती पै तू ही माला।
जिह्वा पै गीत तू हो मैं तेरा नाम गाऊँ।
सेवा में तेरी सारे तन को मैं भूल जाऊँ।
यह पुण्य नाम तेरा, प्रतिदिन सुनूँ सुनाऊँ।
तेरे ही काम आऊँ, तेरा ही मंत्र गाऊँ।
मन और देह तुमसे बलिदान मैं चढ़ाऊँ।

(३)

राग—मालकोस त्रिताल

मोरी लागी लगन गुरु कीर्तन की। टेक।
गुरु कीर्तन बिन कुछ नहिं भावे
माणिक ज्योति प्रकाशन की। मोरी ।
भवसागर अँधेरा गहेरा
गुरु दीपक से तरनन की। मोरी ।

भोगी दीपक गुरु शांति सूरीश्वर,
व्याकुलता तुझ दरशन की। मोरी०।

(४)

राग—मोंघामुला महेमान हमारा केम करी दइए विदायरे

मोंघा मूली गुरु पूर्णिमाने आज उगी हैयाना आकाश रे
गुरुजीना पूजन करोरे।

वीती अज्ञान केरी रातडीने वीती अधर्म केरी अमासरे—गुरु०
वेद पुराण आगमे कथा, दिव्य गुरु पुनमना प्रकाशरे—गुरु०
महिमा महेश शेष कथि शक्या, नव गुरु पुजनना खासरे—गुरु०
पूरण कलाए पूर्णिमा पूरण, गुरु भक्ति रस हासरे—गुरु०
गुरुना वेच्या वेचाइए, एवी श्रद्धा स्वार्पण गुरु वासरे—गुरु०
गुरु कृपाए प्रभु प्रगटता, भक्त अंतरीए दिव्य उजासरे—गुरु०
तप त्याग योग धर्म सिद्धिओ, सौनो गुरु भक्ति मां वासरे—गुरु०
वाणी गुरुनी जीवती गणी, ईश्वर वाणी विश्वासरे—गुरु०
कोटी शास्त्रोना ज्ञान पामतोरे, गुरु सेवाथी भक्त श्वासोश्वासरे—गुरु०
पूरण ब्रह्म केरी भावनारे, करो चेतन गुरु मा बनी दासरे—गुरु०
ज्योति अनतनुर झलहले, भक्त नयने गुरु वासरे—गुरु०
हैयाने कोडीए भक्ति दिवट, घृत स्वार्पणने कांइ विश्वासरे—गुरु०
सेवाना वारी नयन झारीए, करो नाथ चरण प्रक्षालरे—गुरु०
कचोला केसर बरासना, भर्या गुरु पूजनने काजरे—गुरु०
उजवीए एवी गुरु पूर्णिमा, नाथ आवजो असाढी लोमासरे—गुरु०
नाथ मणि बुद्धि सिन्धु मा, आज आतम राग रमे रासरे—गुरु०

(५)

मारा प्रेमी भक्तो सहु मालजो हो राज
बंगल मां योगीनी झुंपड़ी
आबू मां योगीनी झुंपड़ी । मारा प्रेमी

कोई लावे आवे तो तेड़ी लावजो हो राज
आबू मां योगीनी झुंपड़ी ।

निर्मल जल मां झीलसुं करसुं प्रभीरस पान
योगनीया मन भावतां, मलीसुं श्री गुरुराज ।

काया पिंजरने प्रेम थी गजालसुं हो राज
बंगला मां योगीनी झुंपड़ी ।

कोटी जन्मना पुण्य थी मलवा श्री गुरुराज
लाख करी पुण ना मल्या लाखो वार धिक्कार ।

तुंही एक तुंही प्रभु मानसुं हो राज—बंगला मां ।
मारा प्राण्ति तूरी ने मन लावसुं हो राज—बंगला मां ।

प्रेम बिना एक नव रीझे, मुक्ति कदी नव थाय
पूरण प्रेम जो होय तो मोक्ष मांही जवाय ।

प्रेम दरीयामां नावसुं झुलावसुं हो राज—बंगला मां ।
एक एकना उमलका बोलसुं हो राज—बंगला मां ।

एक पल जाए लाखनी जवी त्यो श्री गुरुराज ।
जो जो मा भव मुक्ता मलशे नहीं परिवार ।

भक्तोनी विनती छे एवी हो राज—बंगला मां।
प्रेम भक्तिमां मलसुं बोलसुं हो राज—बंगला मां।

(६)

देखो मेरे सदगुरुवर ने, कैसा ध्यान जमाया है।
प्रेम भरी आँखों मे देखो, करुणारस उभराता है। देखो०।

जड चेतन का भेद बता के आत्म रूप दिखाता है।
शांति सुधारस पान पिला के आतम शाति देता है। देखो०।

राग द्वेष की ज्वाला प्रगटे, इन्को वो मिटाता है।
क्रोध मान माया को पीस के, अतर रोग हटाते हैं। देखो०।

मैत्र्यादि भाव बढ़े जगत में, वो ध्यान निशदिन धरते है।
ध्यानाग्नि से कर्म जलाकर, जग में शाति फैलाते है। देखो०।

तन मन धन अर्पण कर गुरु को, भक्ति मार्ग वो पाते है।
गुरु पद पकज ध्यान धरे बिन, जन्म मरण नव जाते है। देखो०।

चिन्तामणी सम सद्गुरु सेवा, पूर्व पुण्य से पाते है।
भक्ति करो सद्गुरु की चित से, सतो सदा इम गाते है। देखो०।

(७)

प्रसिद्ध विदुषी शातमूर्ति साध्वीजी श्री वल्लभ
श्री आदिए गायेली गहुली

आवो आवो शान्तिना सागर, मन मन्दिरमा आप।
मन मन्दिरमा आप गुरुजी, मन मन्दिरमा आप। आवो०।

शान्तिसूरी गुरुदेव अमारे, जगजीवन आधार।
दर्शन दुरित टले भविजनना, शांति शाति करनार। आवो०।

आत्मज्ञानी ध्यानी योगी, ध्याता ध्येय एक तान।
आत्म अनुभव धूनमा रे, सदा रहे मस्तान। आवो०।

शास्त्र विशारद प्रखर वेत्ता वैराग्य प्रमुनाम ।
सरस्वती कंठाभरणमां रे, छे तमने वरदान । मारो० ।
ऊँच नीचनो भेद नहीं छे, राय रंक समभाव ।
जैन अने जैनेतर उपर, जीवन पडे प्रभाव । मारो० ।

मन मन्दिर ना दीपक गुरुजी मोह तिमिर हरनार ।
निज स्वरूपनी खोजमां रे, दिव्य ज्योति दातार । मारो ।
विश्वप्रेमनी सरिता वहेती स्नेह अंकुर विस्तार ।
निर्ग्रन्थ सद्गुरु मल्या रे, करसे बेडा पार । मारो ।

माघ शुक्ल पंचमी दिवसे जन्म जयंति उजवाय ।
ज्ञान ध्यान मंडल गुरु दर्शन, मधुसागर पर भाव । मारो ।

(८)

प्रसिद्ध विदुषी शान्तमूर्ति साध्वीजी श्री ज्ञानश्रीजी उपयोगश्रीजी,
विचक्षणश्रीजी आदिए गायेली गहुंली

राग—पंखीडा संदेशो कहेजो मारा नाथने

शांतिसूरी प्रभु दर्शन देजो आपजी ।
करजो अमारी कृपा करी संभालजो ।
अम जीवन छे तुम चरणोंमां नाथजी ।
भव भव करीने तार जो परम कृपालजो । शांति ।

आपनुं दर्शन छोडयुं अमने दोहीलुं ।
हैया मांही दुःख तणो नहीं पार जो ।
क्यारे दीन हवे क्या रे जगतगुरु आवशे ।
करशुं आपना दर्शन मानन्दकार जो । शांति ।

तुम सत्संगथी थाये पावन आत्मा।
जाने पुद्गल जीव तणो सुविचार जो।
स्हेजानंदी थवानी सुन्दर भावना।
प्रगटे भाविना कोमल हृदय मोझार जो। शांति०।

अति उपकार थयो जे अमपर आपनो।
ते कहेवानी शक्ति नहीं मुज उरमा।
तेह पदार्थ नहीं पण जगमा जेहवो।
भेट करीने थाउ अनृण गुरुराय जो। शान्ति०।

क्यारे उपदेशामृत पान करीश हु।
क्यारे गुरुचरणोंमां नमावीश शीश जो।
क्यारे नयनो तृप्त थशे गुरु दर्शन थी।
क्यारे जोशु एवी लीला सूरीश जो। शांति०।

गुरु वियोग छे सहु दुःख माहीं मोटडु।
ते सहेवा नहीं बाल हृदय सशक्त जो।
ते माटे गुरु अमने वहेला बोलावजो।
छता अयोग्यता जाणी निज पद भक्त जो। शांति०।

नहीं मागु हु राजवैभव धन विश्व नु।
नहीं मागु सुख बाह्य वली परदेश जो।
सविनय मागु गुरु तुम चरण नमी करी।
समकित रत्न ने आपनो धर्म स्नेह जो। शांति०।

सोहन मडलीनी छे फरी फरी प्रार्थना।
किजे हृदयमां सम्यग् दर्शन प्रकाशजो।
जेहथी अनुभव रसनु पान करीने लहे।
सुखमय सुंदर शिवनगरीमा वासजो। शांति०।

(१०)

पूज्य श्री स्थानकवासी लींबडी संप्रदायना महान प्रखर व्याख्यान
दिवाकर श्रीनानचंद्रजी महाराज नुं बनावेलुं भजन

एक योगी वसे मलकेलो आबुना अजब पहाडमां;
ज्ञान ध्याने रसे रस भेलो आबुना गिरिराजमां।
प्रेम भीना नयन ज्योत झलकी रही, (२)
भव्य भाले सुधाशिका बलकी रही (२)
आत्म ओजस ब्रह्मावे धकेलो, रसे रस बेलो
आबुना अजब पहाडमां—एक योगी
ब्रह्मचारी वशिष्ठ अने योगी वरिष्ठ (२)
सिद्ध आसन समाधीमें साध्या छे इष्ट, (२)
शिष्ट शिष्योना पायो प्रजात्मा कलीष्ठ (२)
विश्व-व्यापी विभूतिनी ज्योति विशिष्ट (२)
विश्व शक्ति ने भक्ति भरेलो रसे रस बेलो
आबुना अजब पहाडमां—एक योगी

(११)

आचार्यदेव तपस्व तुही तुम्हीं एक नाथ हमारे हो
जिनके कछु और अपार नहीं तिनके तुम्हीं रखवारे हो ;
प्रतिपाल करो सबही जग को अतिशय करुणा उर धारे हो। आचार्य ।
उपकारन को कछु अन्त नहीं, छिन ही छिन जो विस्तारे हो ;
हम ही तुमको प्रभु भूल रहे हमको तुम नाहिं बिसारे हो। आचार्य० ।
भगवान महा महिमा तुमरी समझे विरले बुधवारे हो।
शुभ शांति निकेतन प्रेमनिधे मनमंदिर के उजियारे हो। आचार्य ।
इस जीवन के तुम जीवन हो, इन प्राणन के तुम प्यारे हो।
तुमसे प्रभु पाइ राम हरी अब तो कुछ और सहारे हो। आचार्य ।

(१२)

राग—झूलणा छंद (प्रभातीउं)

समरतु समरतु सद्गुरुदेवने, नाम समरे सहु पाप जाये।
उठि प्रभातमा समरवा सद्गुरु, नाम निर्मल जपे शांति थाये।
काम अने क्रोधने मान अने मोहने, टालशे ते गुरु नाम लेता।
आत्मशांति थशे चित्त आनंदशे, दिलना दुखडा दूर जासे।
अर्बुदाचल मांहि स्थान छे जेहनु, शांतिसूरी गुरुराज प्यारा।
ज्ञान निधान छो धर्मनु स्थान छो, ध्यानथी योगने साधनारा।
पतित पावन गुरु, सुरी सम्राट गुरु, अब्धि संसारथी तारनारा।
नित्य हो वन्दनाए गुरुदेवने, प्राणथी अधिक गुरुदेव प्यारा।

(१३)

मोरवा पपैया बोले, प्रभु प्रभु वन में
शांतिसूरी प्रभु वसे मेरे मन में।
मेरे गुरुदेव रहे पहाड गुफा में। मोरवा०।
इसी अँधियारी काली बिजली डरावे,
शोर करत है नदिया रण में। मोरवा०।
रिमझिम रिमझिम मेहुला वरसे,
भींज रहे गुरु ध्यान के रंग में। मोरवा०।
आनंद ए सम देखन चाहे,
गुरुजी की महिमा तीन भुवन में। मोरवा०।
निशि अँधियारी में तुम हो दीपक,
राह बतायो एक पलक में। मोरवा०।
सब सखियन मिल यही अरज है,
राखो गुरु श्री चरण कमल में। मोरवा०।

(१४)

अब तो यह जीवन अर्पन है, गुरुदेव तुम्हारे चरणों में।
गुरुदेव तुम्हारे चरणों में, भगवान तुम्हारे चरणों में। अब ।
प्रभु जन्म जन्म से मैं तेरी गुरु तुम पद पंकज की चेरी
न्यौछावर है यह तन मन धन गुरुदेव तुम्हारे चरणों में। अब ।
नहीं चाह और अब है मन में नहीं ध्यान और कोई स्वर्गों में
दिल मग्न रहा है मेरा हरदम, भगवान तुम्हारे चरणों में। अब ।
मन मंदिर में गुरु वास रहो अंधकार में ज्ञान प्रकाश करो
स्वासों के स्वर झंकार रहे गुरुदेव तुम्हारे चरणों में। अब ।
मेरी नैया को गुरु पार करो मेरा जन्म-मरण उद्धार करो
भक्तों की अरज स्वीकार करो गुरुदेव तुम्हारे चरणों में। अब ।

(१५)

श्रीमान् दानवीर सेठ किशनचंदजी साहिबे बनायेसु भजन

तुंही तुंही प्रभु तुंही तुंही।

तुंही तुंही प्रभु तुंही तुंही है गुरु हमारा प्रेम प्यारा (१) तुंही
तुम बिन कौन समपन मेरा तुंही तुंही गुरु तुंही तुंही है।
तुम बिन कौन रखवाला मेरा तुंही तुंही गुरु तुंही तुंही है।
कंचन हुई पहाड़ हुई, गुरु हमारा मांडोली मांही है।
तुंही ब्रह्मा तुंही विष्णु, तुंही महेश्वर तुंही तुंही है।
भवतार तीर्थों भक्तों में कारण कल्याणकारक गुरु तुंही तुंही है।
दास किशनचंद अर्ज करत है तुंही शरण गुरु तुंही तुंही है।

(१६)

राग—धोल

आजे अवसर अमुलख आवीयो,
मल्या आत्म-उद्धारक देव गुरुजी ततखेव, शांतिसूरिरायजी ।।टेक।।
मारा मनना ते मेल मटाडीया,
पाम्यो गुरुना उपदेशथी ज्ञान रसपान । शांतिसूरिरायजी ।१।
भटक्यो बहु अन्धारे अज्ञानमां,
मल्यो नहि कोइ तारणहार गुरुजी दातार । शांतिसूरिरायजी ।२।
कांइक सुकृत हशे पेला जन्मनु,
उदय आव्यु ते तो मारे आज, सर्यां बधां काज । शांतिसूरिरायजी ।३।
भवभवनां बंधन मारा तुटीया,
करी गुरुदेवे मुजपर महेर, थइ छे लीला ल्हेर । शांतिसूरिरायजी ।४।
शरणु साचु छे सद्गुरु देवनु,
बीजां खोटा छे आलपपाल, जगतना ख्याल । शांतिसूरिरायजी ।५।
दया करी शरणमा राख जो,
भक्त मडल लागे छे पाय, दर्शन थी दु:ख जाय । शांतिसूरिरायजी ।६।

(१७)

राग—माढ

जयगुरु धर्मना मडन, भवदु:ख खडन शांतिसूरि गुरुराय ।१।
प्रेमे पाय हु लागु, शरणु मागु शांति गुरुराय,
बालक वयमां ससार छोड्यो, तज्यो कुटुंबनो सग ।
पूर्वजन्मना तपोबलथी लाग्यो योगमा रग । जय । १

कच्छ के कुल मांही जन्मरिया ते कुल अवतार
मिथ्या भास जगतनी जाणी छोडी चाल्या घरबार । जय । २

धर्मसिंहने पाम्युं सूरि ते वन वन कीधो वास
आत्मज्योति अंतर देख्युं, रोकी श्वासोश्वास । जय । ३

ज्ञानी अन्तर में ज्ञानी मलीया गुरु श्री ज्ञानभंडार
दीक्षा लईने संयम ताप्यो ॐ सोऽहम् नाम उच्चार । जय । ४

अंतरना ॐकारनो जाप्यो सर्व धर्मनो सार
ॐकारे मातृपिरि पधवीयो धन्य गुरु अवतार । जय । ५

हिंसा तजावी अनेक भासे नमाव्या छे भवभूप
नमावे मस्तक ती कोइने नीरखी रूप अनूप । जय । ६

परम योगीश्वर गुरुनी आपने नित्य नित्य लागुं पाय
कृपा करो गुरुदेव सेवकपर, पातक सर्वे जाय । जय । ७

भक्त मंडलने मन वसीया गुरुजी ज्ञाननिधान
नेमो तणु मन नेमनुं भावे करी दर्शन रसपान । जय । ८

गुरुपद पंकज पूजतां ताप सकल टली जाय
भवसागरमें तारवा समर्थ छे गुरुराय । जय । ९

(१८)

बसे हे लाखों ही ज्ञानी ध्यानी न तुमको अब तक निहार पाया ॥ टेक ॥
माया अपार तुम्हारी भगवन कभी किसीने न पार पाया । बसे । १
किसीने वन वन की खाक छानी किसीने पूजा है भाव जानी
यहाँ पर किस रूप में रहे तुम न ये किसीने विचार पाया । बसे० । २
किसीने माला में जप कोई फिरा है दुनियाँ के मांही कोई ।
हरेक तारों में सुर तुम्हारा तुम्हारा लेकिन न तार पाया । बसे । ३

(१९)

राग—भीम पलाश

ए जगमाही अद्भुत योगी, एनी ज्योति जगमग जगमगती ,
ए त्यागी तपस्वी वैरागी, एनी आखलडी करुणा भीनी । टेक।
एना वचन सुधारसथी भरीया, जगगणने उपकारे हरीया ,
एना वचन अमीरसथी भरीयां, पापीना पाप जलन करीया । ए० । १
एने भेद न थी ऊँच के नीचनो, ए रसियो छे आत्मिकजननो ,
एनो मार्ग अनुपम न्यारो छे, आत्मिकजन एने प्यारो छे । ए० । २
ए जगनो साचो उपकारी, एनी कीर्ति करे आलम सारी ,
ए मस्त सदा आत्मिक रगे, नहीं परवा एने जग सगे । ए० ।३
अर्बुदगिरि शिखरे विराजे छे, शातिसूरि नामे गाजे छे ,
ए जगमाहीं अद्भुत योगी, करे वदन तुझ बालक भोगी । ए० ।४

(२०)

तेरी मुरती अजब तेरी सुरती अजब, तुझपै वारी जाऊँ (२)
रायकाश्री तोलाजीना नवन, जगमाहीं विख्यात (२) तेरी० । १
आहीर कुल में जन्म धरायो, जेनी वसुदेवी मात (२) तेरी० । २
देश मरुधर राज्य सिरोही, गाम मणादर मांय (२) तेरी० । ३
अजब ज्ञानी धर्मधुरधर, अहिंसा ध्वज फरकाय (२) तेरी० । ४
धर्मविजयजी के पट्टधारी, तिर्थविजयजी महाराज (२) तेरी० । ५
शाति प्रभु जी शाति के दरिया, पूरें वांछित काज (२) तेरी० । ६
आबू अविचल पहाड माहें, कीधा शुभ योग ध्यान (२) तेरी० । ७
आनदघनजी नी उपमा छाजे, प्रगटया आत्मज्ञान (२) तेरी० । ८
देश देश के यात्री आवे, प्रीते गुरु गुण गाय (२) तेरी० । ९
शांतिचरणरज बालक विनवे, आशीर्वाद ने च्हाय (२) तेरी० ।१०

लेखक—मास्तर बालचदजी , शाकाज

(२१)

राग—काफी समाप

मरुदेश की भूमि पवित्र हुई, गुरुराज तुम्हारे चरणों से।
गुरुराज तुम्हारे चरणों से, भगवान तुम्हारे चरणों से। मरु ।
राम रंग सभी भाव बसें, गुरुराज तुम्हारे चरणों में। मरु ।१
जंगल पहाड़ों में वास किया वर्ष बंबर तप और ध्यान किया
अंधकार में ज्योत प्रकाश रही गुरुराज तुम्हारे चरणों में। मरु ।२
कई रावोंने उपदेश मान लिया मदिरा मांस का त्याग किया
पशुवध बंद करवाय दिया दीनानाथ तुम्हारे चरणों में। मरु० ।३
आत्मिक धन उन्हें प्यारा है इस लोक में गुरु जो प्यारा है।
शांति का धन विकास किया गुरुराज तुम्हारे चरणों से। मरु० ।४
कर जोड़ि ये मानकचंद कहे मेरे सिरपै गुरु का हाथ रहे,
मुझे आशिर्वाद का दान मिले दीनानाथ तुम्हारे चरणों से। मरु ।५

(२२)

राग—सिन्ध भैरवी—ताल त्रिताल

उतार गुरु प्यारे भवजल से पार उतार। गुरु
शांतिसूरीजी का दर्शन कर लो, शांति है सुख अपार अपार। गुरु १
नाम है जैसा गुण है वैसा गुरु की है बलिहारी हार। गुरु २
भवसागर से कैसे तिरुँ मैं नैया पड़ी मझधार धार। गुरु ३
पशुवेदी की कुटीए तपस्या धन्य धन्य तुमे गुरुराज राज। गुरु ४
देश देश से वंदन आवे बहुत से नरनार नार। गुरु ५
चांदकुमारी अरज करत है धर्म का मर्म दो बताय। गुरु ६

(२३)

राग—कव्वाली

ऐसा समय हो भगवन् जब प्राण तन से निकले,
जब प्राण तन से निकले, गुरु नाम मन से निकले। ऐसा० १
गुरुराज की हो छाया, मन में न होवे माया,
तप से हो शुद्ध काया, जब प्राण तन से निकले। ऐसा० २
मन में न मान होवे, दिल एक तान होवे,
तुम चर्ण ध्यान होवे, जब प्राण तन से निकले। ऐसा० ३
ससार दुःख हरणा, गुरुदेव का हो शरणा,
हो कर्म मर्म खरना, जब प्राण तन से निकले। ऐसा० ४
अनशन को शुद्ध वट को, प्रभु शांतिसूरी घट हो,
गुरुराज भी निकट हो, जब प्राण तन से निकले। ऐसा० ५
यह बात सुन तो लीजे, इतनी दया तो कीजे,
दासों की अरजी लीजे, जब प्राण तन से निकले। ऐसा० ६

(२४)

राग—तुम्हीं ने मुझको प्रेम सिखाया

शांतिसूरीजी मुझे दिल में भाया, काल अनादि का मोह भगाया।
गुरु शांति मेरे दिल में बसाया, आतम ध्याता ज्योति जगाया।
तुम्हीं हो वीतराग गुरुजी (२) शांति०। १
काल अनादि से भव में फँसाया, सुख नहिं पाया दुख में हटाया।
तुम्हीं हो योगीराज गुरुजी (२) शांति०। २
गुरु चरणों में सिर को झुकाया, दुख हटाया, मोह मिटाया।
तुम्हीं हो भक्तवत्सल गुरुजी (२) शांति०। ३

मन शांति सूरी मेरे दिल में ठामी गुण गुण गाया मन से हरामा।
तुम्हीं हो वीतराग गुरुजी (२) शांति । ४
भूल न जावे बुध को बुलाया ज्ञान अपसार मार्लेव पसर।
तुम्हीं हो तारन तरन गुरुजी (२) शांति । ५

(२५)

हाँ आया हूँ गुरुद्वार फिर कुछ ले के जाऊँगा
लेके जाऊँगा गुरुजी लेके जाऊँगा। आया १
हाँ सुख दुख की सब बातें उनको कहके सुनाऊँगा— आया २
भक्ति तुम्हारी कच्चा सीखी देते सबको ज्ञान
हाँ कृपा तुम्हारी सहजे पाऊँ लेके जाऊँगा।— आया २
प्रेम शांति का सार बताते ज्ञान बताते हो
हाँ ॐ मंत्र की शिक्षा दे दो लेके जाऊँगा। आया॰ ३
मनमंदिर अंधकार है पाया ज्ञान नहीं पाया
हाँ ज्ञान प्रकाश की ज्योत दिखा दो लेके जाऊँगा— आया ४
बालकलाल विनय कर जोड़ी वांछित फल मांगे।
हाँ आशीर्वाद का दान दिला दो लेके जाऊँगा। आया ५

(२६)

पूज्यश्री स्थानकवासी लीबड़ी संप्रदायना महान प्रखर व्याख्यान दिवाकर
कविवर्य श्री नानचंद्रजी महाराजनुं बनावेलुं भजन

राग—जिन मन का डंका

कहो क्यां समजे कहो क्यां समजे
ए प्रभुनां वागत क्यां समजे;

जे पतित उपर पण प्रेम करे
दुश्मन उपर पण रहेम करे,
प्रभु राजी रहे नित्य एम करे
ए प्रभुमा पागल क्या मलशे। कहो० १

ऊँचा निचानो भेद न थी,
धन जन खोयानो खेद न थी,
ज्या अधिक थवानी उमेद न थी,
ए प्रभूमां पागल क्या मलशे। कहो० २

ए जग व्यवहारो छोडे छे,
तृष्णाना बधन तोडे छे,
जीवन प्रभु भजने जोडे छे,
ए प्रभुमां पागल क्या मलशे। कहो० ३

ए काम करे छे प्रभुने गमतां,
दुःखोमां पण राखे समता,
नहीं माया मान अने ममता,
ए प्रभुमां पागल क्यां मलशे। कहो० ४

प्राणी ने निज सम देखे छे,
स्त्री ने माता सम देखे छे,
लक्ष्मी मट्टी सम लेखे छे,
ए प्रभुमा पागल क्या मलशे। कहो० ५

सुख अर्पीने सुखमा रहे छे,
दुःख सहीने पण सेवा दे छे,
अणु अणुमां प्रेम सदा वहे छे,
ए प्रभुमा पागल क्या मलशे। कहो० ६

विषयो तज मन थी त्यागे छे,
पुद्गल रस रसहीन लागे छे।
ए निशदिन ध्यानमां जागे छे,
ए प्रभुमां पागल क्यां मनाशे। कहो० ७

जे निज मस्तीमां म्हाले छे,
चिदानंद प्रभु पंथ चाले छे
संत सेवक थई दील पाले छे,
ए प्रभुमां पागल क्यां मनाशे। कहो ८

(२७)

तूंही तूंही नाम गुरु आवे रे संकट में
आवे रे संकट में आवे रे विपत में। तूंही १
ये जीवन का नहीं कुछ भरोसा, बादल ज्यूं छिप जावे पलक में। तूंही २
शांतिसूरी गुरु में गुण पाके, परमानंद पद पायोरे जगत में। तूंही ३
शांति है सूरत प्रेम की मूरत सुशांत सूरी गुण गायो रे भजन में। तूंही ४
आशिर्वाद मन वांछित मांगे, दासी तो मन लागे रे चरण में। तूंही ५

(२८)

राग—गरबानो

महाविदेहमां जइने कहेजो चांदलीया (२) पुष्करजी तेडां मोकले
मने तुज बिनु कांई नाम छे, मारो जीवनको जगनाथ छे
कृपा करीने दर्शन दे जो चांदलीया पुष्करजी। १
हारे हुं तो मोह जंजालमां डूबी प्रभु आपनुं नाम हुं तो भूली
व्याकुल कृपा ना हुवे आवे चांदलीया पुष्करजी। २

णा दिवसनी आश आज पूरी, मारा हैंयानी हाम छे अधूरी ,
आटली विनती जइने कहेजो, चांदलीया गुरुवरजी । ३

राजनयरना भक्तो आविया, घणा प्रेम थी गुरु ने बधावियाः;
कलाने कान्तानी विनती स्वीकारजो, चादलीया गुरुवरजी ।

(२६)

राग—काली कमली वाले तुमको

श्री शांतिसुरी भगवान तुमको लाखों प्रणाम । टेक ।

जीवदयानी ज्योत जगावी, अहिंसा केरी धूनी लगावी,
गुरुजी शांति तणा सम्राट—गुरु को । १

सागर जवी शांति तुमारी, मेरु जेवी धीर तुमारी ,
गुरुजी क्षमा तणा भंडार—गुरु को । २

क्रोध मोह ने दूर थी बाली, मोह माया ने जड़थी टाली ,
तमे थया वितराग—गुरु को । ३

विश्व ऋणी छे नाथ तमारु, भक्तो जपे छे नाम तमारु ।
धन्य धन्य अवतार—गुरु को । ४

(३०)

गुरुदेव तारी बेलडीए
अमे वलग्या नहीं छुटा पडीए—गुरु
अमे जड़ीआ वज्रनी साकलीए—गुरु १
सुख दुःखमा पण संभालीशु,
अमे घडीए पण ना वीसरीए—गुरु २

तारी वीवेली नीमोली अमे आवइुं,
मळवुं नहीं परमी कोकनीए—गुरु
अमे रीमीमुं तुज रामडीए—गुरु ३

एमे हंकावुं तुज तानमीए,
अमे मने पडीएने मोनडीए—गुरु ४

तारी वीवेला पुन्नोपी अम पापो,
मामे वे दमी पुंछडीए—गुरु ५

अमने तारवो तेलमी तानडीए,
अमे सुवर्ण सम पद नीकलीए—गुरु ६

(११)

अवतार परमात्मा शांतिसूरी भूमी का भार उतारन को
भूमी का भार उतारन को भूमी का भार उतारन को—अव १
श्रीराम की माता कौसल्या श्रीकृष्ण की माता देवकीजी,
सूरीश्वरजी की माता वसुदेवी भूमी का भार उतारन को—अव २
श्रीराम के पिता दशरथ था श्रीकृष्ण के पिता वसुदेव था,
सूरीश्वरजी के पिता तोलाजी भूमिका भार उतारन को—अव ३
श्रीराम की नारी सीताजी श्रीकृष्ण की नारी रुक्मणीजी
सूरीश्वरजी बाल ब्रह्मचारी हैं भूमि का भार उतारन को—अव ४
श्रीराम की नगरी अयोध्या थी श्रीकृष्ण की नगरी मथुरा थी
सूरीश्वरजी का नगरी पहाड़ गुफामें है भूमि का भार उतारन को—अव ५
श्रीराम क हाथ में धनुष्य था श्रीकृष्ण के हाथ में बंसरी,
सूरीश्वरजी तो दंडधारी है भूमि का भार उतारन को—अव ६
श्रीरामे रावण मार्या था कृष्णे कंस पछाड्या था
सूरीश्वरजी तीर्थों का उद्धार किया भूमि का भार उतारन को—अव ७

श्रीराम की सेना वानर थी, श्रीकृष्ण की सेना जादव थी,
सूरीश्वरजी की सेना भक्तों की, भूमि का भार उतारन को—अव० ८
श्रीराम थे वानर के रखवाल, श्रीकृष्ण थे ग्वालों के रखवाल,
सूरीश्वरजी भक्तों के रखवाल, भूमी का भार उतारन को—अव० ९

(३२)

राग—धन्याश्री

मन लाग्यु मारुं लाग्यु गुरु तारा ध्यानमा,
गुरु तारा ध्यानमा एक तारा तानमा। मन० १
खान न सूझे पान न सूझे तारा ध्यानमां,
मान अने अपमान न सूझे तारा ध्यानमा। मन० २
ता प्रभु त्राता छे सुखदाता तारी नामना,
सुरवर नरवर मुनीजन गुणीजन तारा गानमा। मन० ३
नमन पूजन तुम करीए भगवान पुरो कामना,
शिवसुख आपो भवदुख कापो रहीए ध्यानमा। मन० ४

(३३)

राग—आशामंड छाया

तेरे चरण में आ खडा तेरा भिखारी हूँ,
कृपा नजर से देखिए दीन वाल तेरा हूँ। तेरे० १
चोराशी लाख फेरा छाया रहा अंधेरा,
उसी में रहा फीरा वडा दुखारी हूँ। तेरे० २
अब आपको ही देखा सब रूप से अनोखा,
वोही अनुपम रूप का ज्ञानाधिकारी हूँ। तेरे० ३

तुमारे हे भक्ति प्रालम भी मुन भति
प्रब तो में प्रभु आपका क्या भिखारी हूँ। तेरे ४

अपार तेरी शक्ति मेरी है अल्प भक्ति
तो भी मै तेरे नाम का प्योरा सितारी हूँ। तेरे ५

काम नहीं धन माल का आखिर वो क्या काम का
प्रेम भक्ति दीजिए जोगी भिखारी हूँ। तेरे० ६

(१४)

राग—रसिया बंधाओ मैया

पुज्जी तुमारे द्वार वे भिखारी आ खड़ा हूँ
भक्ति की मेरी झोली चरण में तेरे डाली
देने मुझे न खाली जग में दाता हो। पुज्जी १

तुम दातारों के दातार, मैं तेरा ही गुण गाता
फिर क्यों नाथ नहिं देता तेरी आशा है। पुज्जी २

यह दास तुम्हारा आया, भक्तों के संग में आया
चरणों में शीश नमाया दर्शन दीजाओ प्रभुजी
व्याकुल हो रहा हूं। पुज्जी ३

(१५)

राग—मोहे प्रेम के फूंदे

मोहे शांतिपुरी गुरु बता दो सखी
मोहे पहाड़ गुफा में लह जाओ सखी। मोहे १

मात वसुदेवी कुक्षी से उपज्या,
मोहे अमृतवाणी सुना दो सखी। मोहे० २

तरण तारण गुरु दुख निवारण,
कोई आहीर कुल को दीपायो सखी। मोहे० ३

चांदकुमारी चरणो की चाकर,
मोहे निशदिन दर्शन दीखा दो सखी। मोहे० ४

(३६)

खरतरगच्छ की प्रखर विदुषी राजेन्द्रश्रीजी गायेली गहुली

दुःखहर सुखकर अघहर गुरुवर जय तुम्हारी जय जय,
तोलाजी कुलदीपक नदन, कर्मारी का करते भजन,
शमदम गुण युत गुरु मन मजन।
शिव सुख कदन तुमको वदन जय तुम्हारी जय जय। दुख० १

किया जगत का बहुत सुधारी, शांतिसूरि भगवान हमारा,
वसुदेवी जाया सव मन भाया, जय तुम्हारी जय जय। दुख० २

काटो मेरे कर्मों की फांसी, दुनियां में नहि होवे मेरी हांसी,
तुम विन गुरु में रहुँ उदासी।
वीत दान नामी अन्तरयामी, जय तुम्हारी जय जय। दुःख० ३

दीनानाथ दया कीजे, कुमति काप सुमति मोय दीजे,
मिथ्या तिमिर अघनाश करीजे,
राजेन्द्र को तारो, पार उतारो, जय तुम्हारी जय जय। दुःख० ४

(खरतर गच्छना)

(१७)

राग—भैरवी

पृथ्वी पुजारण बनी हती चाली धुं पूजवाने धाम
दूर थी निहाळती मूरतीनी वाटडी जीवननी ज्योत जगावती ;
हरिष वो पृथ्वी वो कहावती मन-मंदिरमां गुरु ने झुलावती । हतो १

पाने करें सखी भावना भाषा सुणे सागरमां
प्रेम सुणे मननुं जीवन मोसेला वाय
माता भर्यु जीवन हुं निभावती
गुरुओना प्रेम थी जीवन हुं वीतावती । हतो २

(१८)

राग—भैरवी

दुनियाँ के वास पुकार रहे गुरु शांतिसूरि प्रभो शांतिसूरि ।
हर स्वर में ये उच्चार रहे गुरु शांतिसूरि प्रभो शांतिसूरि । १
मणधार धाम प्राहिर कुल थो। धमुबेनी माता के पुन हो थे
मानवमं सूरि सम्राट रहे गुरु शांतिसूरि प्रभो शांतिसूरि । २
मनमंदिर में मान रहो (गुरु मान रहो) अंधकार में ज्ञान प्रकाश करो
सदा पापीओं तारणहार रहो गुरु शांतिसूरि प्रभो शांतिसूरि । ३
जो भाव से मन में ध्यान करे (गुरु) भवसागर से वह पार तरे
नहि भावावलम्बन बेपार रहे गुरु शांतिसूरि प्रभो शांतिसूरि । ४
मेरी नैया को गुरु तुम पार करो मेरा जन्ममरण से उद्धार करो
ये बालक की विनती स्वीकार करो गुरु शांतिसूरि प्रभो शांतिसूरि । ५

(३९)

गरबो—राग; वागे छे रुडो वेणुकाना मनमॉही

वागे छे रुडी वेणु आवूना वनमाँहि,
आबूना वन माँहि शांतिना वन माँहि हां प्रभुना वन माँहि । वागे० १
जाउ दर्शने गुरुप्रेम पुष्पोए वधाववा,
मारु हैयु हर्षे उभराय शांतिना वन माहीं । वागे० २
शांति गुरु नाम प्यारू, भक्तोने खूब प्यारू,
चरणरज उतारी लइए शांतिना वन माहीं । वागे० ३

(४०)

राग—प्रकटया श्रीकृष्ण मनभावता रे लोल

भक्तो पधारो गुरुमंदिरेरे लोल,
मंदिरे विराजे गुरुदेव जो । भक्तो० १
रजनी वधावे रुडा चंद्रनेरे लोल,
गुरुने वधावु हुय तेम जो । भक्तो० २
मंदिरे वागी ऊँनी तानरे लोल,
ए ताने हुँ राखु ध्यान जो । भक्तो० ३
चालो पूजीए गुरुदेवनेरे लोल,
सौ अंग मला गाशु गुण गान जो । भक्तो० ४
गुरु ने अर्पीशु आपणु जीवन रे लोल,
हृदय मंदिरमा ह्वालां गुरुदेव ने जो । भक्तो० ५
आवो भूलीने सौ जगभाननेरे लोल,
प्रेम भक्तिनी छोळो उडाडी शु जो । भक्तो० ६

(४४)

राग—मेरे मौला मदीने बुलाले मुझे

गुरु शांति के दर्शन की कामना करो। (२)
विनय भक्ति से शीश नमाया करो
प्रेम भक्ति से शीश भुकाया करो। (२) गुरु० १

गुरु-दर्शन और वंदन ही जगत् में सार है
शुद्ध चित्त से इनको ध्यावे उसका बेड़ा पार है।
गुरु शांति के शरणे तुम आया करो
विनय भक्ति से शीश नमाया करो। (२) गुरु २

मैं फंसा हूँ कामिनि-मोह लोभ और कंचन के बीच
सद्गति हो कैसे मेरी में पड़ा बंधन के बीच।
गुरु करके क्षमा तुम बचाया करो
प्रेम भक्ति से शीश भुकाया करो। (२) गुरु ३

इंडिया यूरोप सब जग में अमर नाम है गुरुराज का
हो सदा कल्याण जग का, यही मन गुरुराज का।
आशीर्वाद का दान दिलाया करो
गुरु शांति का पाठ सिखाया करो। (२) गुरु ४

लाख भक्तों से छिपेंगे ढूंढ लेंगे हम वहीं
मजाफ़्फ़र नहीं भागू कहीं जहाँ होवें तुम वहीं।
हम भक्तों में भक्ति दिखाया करो
गुरु शांति का पाठ पढ़ाया करो। (२) गुरु ५

छा रही महिमा तुम्हारी, चहूँ दिशि ससार में ;
दास मानक के वसो तुम, अब हृदय मदिर में।
अपनी मूर्ति के दर्शन दिलाया करो,
हम भक्तो को आप बचाया करो। (२)
अपनी भक्ति में ध्यान लगाया करो। (२) गुरु० ६

(४५)

राग—मालकोस

खोल दो अब तुम द्वार, गुरुवर खोल दो अब तुम द्वार,
तुम्हे वदन करूं वारवार, सूरीश्वर खोल दो अब तुम द्वार। खो० १

आंख से दर्शन भाव से पूजा, मन में भक्ति का विचार,
योगीश्वर खोल दो अब तुम द्वार। खो० २

वहुत देर से अखियां तरसें, खोल दो वारी द्वार,
ज्ञानीवर खोल दो अब तुम द्वार। खो० ३

दर्शन दे मगलीक सुनाओ, तुम दर्शन सुखकार,
ध्यानीवर खोल दो अब तुम द्वार। खो० ४

धूप पडे मन अति अकुलाय, कर जोड करूँ मैं पुकार,
पूज्यवर खोल दो अब तुम द्वार। खो० ५

दास मानक की आशा पूरो, तार दो भवसिंधु पार,
दयासिंधु खोल दो अब तुम द्वार। खो० ६

(४६)

लखनौवाला तथा काश्मीरवालानुं मनापसंद भजन

मुझ अबला की पुकार सुनो, मेरे सद्‌गुरुजी मेरे सद्‌गुरुजी;
तुम ध्यान धरैया अब दो दर्शन मेरे सद्‌गुरुजी मेरे सद्‌गुरुजी।
तुम मौन धरैया अब दो दर्शन मेरे सद्‌गुरुजी
मेरे सद्‌गुरुजी। मुझ १

मेरे इस जीवन की टेक यही मेरी अभिलाषा है एक यही,
तुम ध्यान धरैया अब दो दर्शन मेरे सद्‌गुरुजी मेरे सद्‌गुरुजी
मेरे ज्ञानी गुरुजी मेरे ध्यानी गुरुजी। मुझ अबला की २

सब सर्व सुधा के बैठी हूं, सब तुमसे आशा के बैठी हूं,
चरणों पर न्योछावर तन मन धन मेरे सद्‌गुरुजी
मेरे सद्‌गुरुजी। मुझ ३

मेरे ज्ञानी गुरुजी मेरे ध्यानी गुरुजी
मुझ अबला की पुकार सुनो मेरे सद्‌गुरुजी मेरे सद्‌गुरुजी
मुझ दासी की पुकार सुनो मेरे ज्ञानी गुरुजी मेरे ध्यानी
गुरुजी। मुझ० ४

(४७)

राग—कौशीया

तुम पापियों के भाता हो तुम जगतपिता और माता हो
हमें निज चरणों में लाओ प्रभु हमें अपना दास बनाओ प्रभु। तुम १

अब भारत पाप में डूबा जी प्रभु रखो विरद तुम्हारा जी।
संसार विषय-सुख छोड़ पिता में शरण तुम्हारी आज पड़ा। तुम २

ज्यो जानो मुझको तारोजी, भवसागर पार उतारोजी,
जहँ मात-पिता न भाई है, तहां केवल आप सहाई है। तुम० ३

तुम जगतगुरु जगदीश्वर हो, तुम सब सृष्टि के ईश्वर हो,
मेघ अग्नि तुमको ध्यायें है, जलवायु तव गुण गाये है। तुम० ४

जग सघळी तुम्हें ध्यावेजी, कोइ अन्त न तेरा पावेजी,
तुं करुणा हस्त पसारा है, तुम सबका एक सहारा है। तुम० ५

तुम जग बंधव जग स्वामी हो, तुम सबके अन्तरयामी हो,
तुम दीनानाथ दयालु हो, सर्व आश्रय और कृपालु हो। तुम० ६

आशीर्वाद हमें दीजेजी, मन भक्ति तेरी में भींजेजी,
अब दया का हाथ पसारोजी, हम सबको लेउ उद्धारोजी। तुम० ७
(सब भक्तो को लेउ उद्धारोजी)

(४८)

राग—नागर वेलीओ रोपाव

भजिए शांतिसूरी भगवान, भजता आवे भवनो पार,
भजता आवे भवनो पार, भजता आवे भवनो पार रे। भ० १

तुम हो ध्यानी पूरन ज्ञानी, तुम हो सबके अंतरयामी,
तुम हो पूरण योगीराज, भजतां आवे भवनो पार रे। भ० २

तुम शांति के पूरण दाता हो, तुम प्रेम को पूरन दाता हो,
तुम हो शान्ति के अवतार, भजता आवे भवनो पार रे। भ० ३

तुम जगत्गुरु कहलाते हो, तुम जगबांधव कहलाते हो,
तुम हो जग तारनहार, भजता आवे भवनो पार रे। भ० ४

तुम पहाड़ गुफा में फिरते हो, तुम आत्मध्यान में रमते हो
तुम धन्य धन्य अवतार भक्तों आवो भवनो पार रे। भ ५

तुम जंगल झाड़ी में फिरते हो तुम बाघ सिंह से न डरते हो
तुमको वंदन कोटि हजार, भक्तों आवो भवनो पार रे। भ ६

ए बाल भक्तो गुण गाते हैं तुम चरणों शीश नमाते हैं
भक्ति दीजो अपरंपार भक्तों आवो भवनो पार रे। भ ७

(४९)

प्रेमी शान्तिसूरी भगवान तुम हो प्रेम सिखाने वाले
तुम हो ज्ञान बताने वाले सच्चा मार्ग बताने वाले। १

गुरु शान्ति के अवतार, तुमको वंदन बारंबार
तुम हो अद्भुत योगीराज मोक्ष का मार्ग दिखाने वाले। २

जो शरण में आपकी आवे मनवांछित फल वह पावे
तुम हो ध्यानी श्री भगवान, बेड़ा पार लगाने वाले। ३

गुरु दर्शन अति सुखकारी, पाप भर्गे सब नरनारी
आचार्य सूरि सम्राट् सच्चा ध्यान बताने वाले। ४

गुरुभक्ति जग में सार, इसका कर लो सब व्यापार
बाकी झूठा सब रोजगार, लाभालाभ दिखाने वाले। ५

प्रभु शान्तिसूरिजी भगवान, मेरी आशा कर दो पूरी
मानव अर्ज सुनो गुरुराज, आशिर्वाद के देने वाले। ६

(५)

सम्राट श्री गुरुराज तुम तो प्रेम के अवतार हो
शान्त सूरत शान्त मूरत शान्ति के अवतार हो। १

सकट हरन सुख के करन, गुरु शाति के दातार हो ,
गुरु शरण में आ पडा हूँ, आपका आधार हो । २

कर्म की आधी भयानक, भँवर में नैया पडी ,
थाम लो पतवार हो, गुरु आप खेवनहार हो । ३

भिखारी आपकी कृपा का, और दर्शन का मैं
आपका दर्शन मुझे हर साल वारवार हो । ४

की अरज मानक ने रोकर, गुरुराज के चरणो में यह ,
देखना निष्फल न मेरे, आँसुओ की धार हो । ५

(५१)

दयासिन्धु कृपासिन्धु, प्रभु परमात्म गुरुदेवा ,
अकारण विश्वना वन्धु, गुरुजी कोटि वन्दन हो । १

महा अज्ञान अधारु छवायु देह मन्दिर माँ ,
प्रभो आत्मा उजालो हो, गुरुजी कोटि वदन हो । २

अलौकिक आत्मशक्ति यों, न थी विश्वास पामरने ,
उघाडो नेत्र अजन थी, गुरूजी कोटि वदन हो । ३

न थी श्रद्धा न थी भक्ति, न थी सेवा जिगर जागी ,
वनावो शुद्ध आत्मार्थी, गुरुजी कोटि वदन हो । ४

हजु हु तु न थी जातु, स्वरूप तारूं न समजातु ,
चरण लयलीन नव थातु, गुरुजी कोटि वदन हो । ५

तमो त्यागी अमो भोगी ज्ञान योगी तमे पुरा ,
जगतना ओ जुना जोगी, गुरुजी कोटि वदन हो । ६

वह्ने कह नवा चेतन, भरो भक्ति गुरुदेवा ,
तमारी प्रेम भक्ति माँयाँ, रगेरग जोडजो देवा । ७

(५२)

तुम एक अलौकिक हो भगवन त्रिभुवन में सचमुच लाखों में
है प्रेम शांतिरस भरा हुआ भरपूर तुम्हारी आँखों में। १
तुम जग से हमसे प्यारे हो औ जीवन आधार हमारे हो
तुम प्यारे हो पुण्य-पापी से है प्रेम तुम्हारी आँखों में। २
तुम विश्वप्रेम का पाठ पढ़ा पशुओं में ध्यान का रंग चढ़ा
दिखलाई पड़ती है अतिशय करुणा ही तुम्हारी आँखों में। ३
तुम राग द्वेष जलाया है और मोह माया को हटाया है
शांति रस का भरा भरा है सूरीश्वर तुम्हारी आँखों में। ४
ए बचन तुम्हारा सुना करे, जब भर तुम कल्याण करे
अति कूट कूटकर भरा हुआ विश्वप्रेम तुम्हारी आँखों में। ५
तुम आत्मरस को पिलाता है कर्मोंमती से हमें बचाता है
तुम धर्म से हर्ष उभराता है, दीनानाथ हमारी आँखों में। ६

(५३)

मने मळ्या गुरुवर ज्ञानी रे, मारी सफल थई जिन्दगानी
शांति सूरीश्वर प्रभु ज्यने दीठा गुरुदेव मने लाग्या मीठा
आतम उजास बतावी रे—मारी
ज्ञाननी चमकित ज्योति जगावी, सद्उपदेशनी धारा वर्षावी
भवकुप पुन बचावी रे—मारी
सत्य जीवननां सुन्दर चित्रो दयानीति निस्वार्थता तणो
आतम प्रकाश बतावी रे—मारी
गाजे अजाण्या प्रेमभक्तिना (विश्वप्रेमना)
समभाव सादाई ने अहिंसाना
बंधुत्व ने प्रस्थापी रे—मारी

अतर अमारा उद्दल्या हर्षे, फरी फरी मलशु प्रतिवर्षे,
सत समागम मेलवी रे—मारी०

शातिसूरी भगवान ने वदो, त्यागो हवे सहु खोटा फदो,
भक्ति देवी ए पीछागी रे—मारी०

ीस्यानकवासी लींवडी सप्रदायना प्रसिद्ध वक्ता व्याख्यान दिवाकर
कविवर्य श्रीनानचन्द्रजी महाराज बनावेलु भजन

(५४)

आवरदा व्यर्थ वितावी ए राग

शुद्ध मारग सत वतावे (२)
अशाति केरा मूल उखेड़ी, परम शांति पयरावे—शुद्ध० १

हिताहित हकीकत सघली, सद्‌बुद्धे समजावे,
कर्म बधना कारण सघलां, जुगती करी जगावे—शुद्ध० २

पाइ पीयालो परम ज्ञाननो, ज्योत अखड जगावे,
अतर घटमां करी अजवालु, आत्म स्वरूप दर्शावे—शुद्ध० ३

भूल सुघारी भव भव केरी, सघला दोष समावे,
अवला पंथ वधा अलसावी, सांचो पथ सुणावे—शुद्ध० ४

भीतरनु भ्रमणा स्यल भागी, निर्भय स्यल निरखावे,
वेरझेरनी लहेर उतारी, निर्विष वुद्ध बनावे—शुद्ध० ५

प्रबल पापनां पडल उतारी, अन्तर नयन खुलावे,
सत शिष्य दुख दूर हटावी, अपूर्व पदवी अपावे—शुद्ध० ६

(१५)

स्थानकवासी लींबडी संप्रदायमां कविवर्य श्रीनानचंद्रजी महाराज
रचित भजन

वात्सल्य-वत्सल विरला पावे विश्वप्रेम विरला प्रगटावे
ए मारग समजे जन विरला विरलाने एनो रस आवे। १
सद्गुरु संग करे कोइ विरला अमृतफल कोई विरला चाखे
अन्तरमां जागे जन विरला कर्म बळोने विरला हठावे। २
तत्त्वातुं त्यागे कोइ विरला ज्ञान नदीमां विरला न्हावे
आतम रमण रमे कोइ विरला, अमर बुट्टी विरला प्रगटावे। ३
समजे आत्मसमा सहु विरला ध्यान प्रभुनुं विरला ध्यावे
सर्वा ने प्रभु अर्पे विरला, संतशिष्य विरला समजावे। ४

(१६)

अनन्य भक्त महात्मा नरसिंह भगत

अनेक गुण विस्तारे एवो पंथे चालनारेजी
नाख्यो नाख्यो चंदवा केरोरे पार। अनेक १
भविजनना बोलेरे अमे अभुं मानवतारेजी
बोल्यो नहि अमारा बरनोरे सार। अनेक २
लोककोमानी जातेरे वाडमें नाख्यो मुकरोरेजी
तेथी अमे किंचा नहि अपनाय। अनेक ३
प्रभु मम पासे रे, विभु जोवा वेमलारेजी
सदा हता साहेब अमारीरे साथ। अनेक ४

सूरज ढ्वाणोरे आकाशमा वादलेरेजी ,
तेथी जेम प्रगटे नहिरे प्रकाश । अनेक० ५

एम अविद्याएरे अवराणो आतमारेजी ,
तेथी सर्व शक्तिनो निरख्यो नाश । अनेक० ६

नावरूपी निर्मलरे, प्रभुजीनु नाम छेरेजी ,
कोइ तेना मालमीया होय सत । अनेक० ७

नरसैयानो स्वामीरे जेह कोइ अनुभवेरेजी ,
तेह नरना भवजलनो थाय अन्त । अनेक० ८

(५७)

राग—आशामां झपताल

ज्या लगी आत्मा तत्व चीन्यो नहि ,
त्या लगी साधना सर्व जूठी ,
मनुषा देह तारो एम एले गयो
मावठानी जेम वृष्टि वूठी । १

शु थयु स्नान पूजाने सेवा थकी ,
शु थयु घेर रही दान कीधे ,
शु थयु धरी जटा भस्म लेपन कर्ये ,
शु थयु वालनो लोच कीधे । २

शु थयुं तप भने तिरथ कीधा थकी ,
शुं थयु माल ग्रही नाम लीधे ,
शु थयु तीलकने तुलसी धार्या थकी ,
शु थयु गगाजल पान कीधे । ३

अन्तरो—

सारी दुनियां मुझसे विगडी, विगड़ा सारा काम,
दरस दिखाकर विगडी वना दो, मै आन परी तोरे धाम,
तुम विन तडप रही हूँ निसदिन, प्रेमनगर सुनसान,
अव में आई शरण तुमारी भगवान,
विन दरशन तज दूंगी प्राण। आई० ३

(५६)

सत पुरुषनो ने सग ! वाइ म्हा'रे भाग्ये मल्यो छे ! ॥ टेक० ॥
सत पुरुपना रे सग वाइ म्हा'रे भाग्ये मल्यो छे। म्हारे०
सत पुरुषना दरशन करता (२) चढे रे चोगणो रग रे। म्हारे०
अडसठ तीरथ म्हारा सतने चरणे (२) कोटी काशीने कोटी
गग रे। म्हारे०
दुरिजन लोकनो सग न करिए, (२) पाडे भजनमा भग रे। म्हारे०
निदाना करतल नरके रे जाशे (२) भोगवशे यइ भोरींग रे। म्हारे०
मीरा कहे प्रभु सत चरण रज (२) उडीने लागो म्हारे अग रे। म्हारे०

(६०)

ज्ञानी ज्ञान दशानी दोर कदी चूके नहीं रे।
विषविधना वहेवारो करता, सघलु करतां छता अकरता,
दोर उपर जेम सुरता नट चूके नहीं रे—ज्ञानी०
जलमां कमलो निशदिन थाता, जल सघाते जलमय थाता,
असगता जेम सग छतां मूके नहीं रे—ज्ञानी०
हाव भाव विधिविधना करती, आडी अवली दृष्टि करती,
हेल नजरथी युवती! जेम चूके नहीं रे—ज्ञानी०

रसना रसमां रसमय बनती स्वादे स्वादे तन्मय थाती
मसमेपता क्षेम लेप क्यां मूके नहीं रे—ज्ञानी
ज्ञानी पुरुष भगवान महात्मा देहधारी पण परमात्मा
निज महिमामां रमता आत्मभाव मूके नहीं रे—ज्ञानी•

(५१)

आबू के गिरि उच्च शिखर पर
आस पास या यहीं कहीं
किसी कन्दरा में रहते हैं
"शांतिसूरजी" संत महान।
कोई कहता है भव तारक
कोई कहता है दीन-बन्धु
कोई कहता है जगत्गुरु
कोई कहता है योगिराज
कोई कहता है त्यागी महान
पर मैं कहता करुणा पूरक
हैं भक्तों के प्रति दयावान।
वे शांतिसूरजी संत महान।
(केसरीचन्द सेठिया)

(५२)

दर्शन कर सब दुख दल जावें
कितने ही भव संकट भागें
प्रभु नाम जपना लगे से
बस शान्ति शान्ति ही छा जावे।

शोषित है ये प्यासे मानव,
उन्मत आज ये है दानव,
वैज्ञानिक ले अपने साधन,
है आज मिटाने जग को आये।
नेतागण जो भारत के हैं,
भारत में क्यो पकडे जावें,
प्रभु! "शान्ति" तुम्हारी शक्ति को,
यदि भारत एक वार पा जाये।

(रुगनाल महात्मा "राघव")

(६३)

आओ शान्ति प्यारे नैया डूब रही है।
तुम हो गुरुवर हम है पुजारी,
हम अज्ञानी तुम पंचव्रत धारी,
तैरावो नाव हमारी नैया डूब रही है।
योगीराज हो योग के दाता,
भवमण्डल के तुम हो त्राता,
"करुणेश" जाय बलिहारी नैया डूब रही है।
आबू शैल में वास तुम्हारा,
गुण गावें भू-मण्डल सारा,
तैरावो नाव हमारी नैया डूब रही है।
जग बीच भँवर, भँवर में नैया,
खेवट हो तुम्हीं खेवैया,
"हजारी" जाय बलिहारी नैया डूब रही है।

(हजारीमल वाडिया)

(९४)

सकल विश्व में नाम तुम्हारा
सकल जग तेरा यश गाता है।
"शान्ति" नाम से पाप कर्म
सब रोग दूर हुए जाते हैं।
"शान्ति" "शान्ति" रट ले प्यारे
जो रटता सो पाता है।
कुछ नहीं लेना कुछ नहीं देना
जो गाता सो जाता है।
तो मूर्ख क्यों नहीं भजता
क्यों भजने से शर्माता है?
हृदय बसाले बस "शान्ति" को
क्यों जीवन व्यर्थ गमाता है।
"मगनकँवरी" दासी चरणों की
"सन्तोष" तेरा गुण गाता है।

(हजारीमल बाठिया)

(९५)

मन मारा चाहे छिन्न थई, गुरुदेव तमारा शुभ दर्शन थी
मनमन्दिर आनंद वृद्धि थई, गुरुदेव तमारा शुभ दर्शन थी। १
एक दर्शन चाहुं गुरुदेव तणुं, बीजुं दर्शन चाहुं नहिं अन्य तणुं
ए मुमुक्षु दर्शना पामुं जरी भवसागर तरवो सहेल न थी। २
घणा सद्गुरुवर जग शोध्या न थी अति पुण्य संयोगे मले जो कदी
ए गुरुवर हाथ कदी पकडे एने कर्म रिपु कदी नव नडे। ३
सद्गुरु चरण मले जो कदी, परम ज्योति दर्शन पामुं जरी
अंतरमां एवी मम भावी दीन मोपी बने कोई बडभागी। ४

(६६)

संध्या-प्रार्थना

जय जय गुरुदेवा, प्रभु जय जय गुरुदेवा,
आरति करुँ सद्‌गुरुनी (२) चरण कमल सेवा
प्रभु चरण कमल सेवा। जय०
चित्त चदन जळ शब्दे, प्रेम तणा पुष्पे,
प्रभु प्रेम तणा पुष्पे,
ज्ञान गुलाल अबील शील (२) धीरजना धूपे
प्रभु धीरजना धूपे। जय०
दीपक अविचल नाम, अक्षत अनुभवना
प्रभु अक्षत अनुभवना,
कर्पुर आरती करुणा (२) लग रही गुरु जपना
प्रभु लग रही जपना। जय०
नथी इच्छा अतरमा, काइ लेवा के देवा
प्रभु लेवा के देवा;
भजन गुरु प्रतापे (२) पामु हु नित्य सेवा
प्रभु पामुं हुं नित्य सेवा। जय०
बहु इच्छा अतरमा निशदिन, गुरु दर्शन करवा
प्रभु गुरु दर्शन करवा
धन्य धन्य अहोभाग्य (२) जे दिन पामुं गुरु सेवा
प्रभु पामुं गुरु सेवा। जय०
आरति सद्‌गुरु केरी, जे कोइ गाशे
प्रभु जे कोइ गाशे,
भाव धरी सेवक कहे (२) शांति थइ जाशे
प्रभु शाति थइ जाशे। जय०

(१७)

नवकार मंत्र स्तवन

भजो भवि मंत्र बड़ो नवकार ।

मंत्र बड़ो नवकार भविजन सब मंत्रन सरदार ॥ भजो० ॥ ए आंकड़ी ॥
शाकिनी डाकिनी भूत पिशाचिनी सब उपसर्ग संहार ॥ भजो ॥ १ ॥
एम पौद्गलिक चौरां चरावत फिरतो अटवी मंझार ॥ भजो ॥ २ ॥
महा उपकारी मुनिवर भारी सीखाव्यो नवकार ॥ भजो ॥ ३ ॥
चौरां चरातीं गाम में आवत नदी चढ़े अनपार ॥ भजो ॥ ४ ॥
महातोय ने धुर मन धर्यो, तो सरिता भई शोष डार ॥ भजो ॥ ५ ॥
शोष मिस मारग में जाता भई पानी प्यास अपार ॥ भजो ॥ ६ ॥
मुसलमीन तब धूप भई बैठो अवर जप्यो नवकार ॥ भजो ॥ ७ ॥
प्यास बढ़्यो जिस पानी बहियो आखिर कूवा बार ॥ भजो ॥ ८ ॥
दुष्ट चोर ने शूली चढ़ायो भई सेठ सोभत गुलजार ॥ भजो ॥ ९ ॥
पर उपकार करन तुम धरियो सीखाव्यो नवकार ॥ भजो ॥१ ॥
शूली ऊपर धुन धरंता, मरने सुर अवतार ॥ भजो ॥११॥
श्रीमती सेठ तणी घर पुत्री स्मरती शुद्ध नवकार ॥ भजो ॥१२॥
सासु हुकम थी घड़म करस्यो छती य पुत्री नवकार ॥ भजो ॥१३॥
पत्नाभूषण पुष्पनी माला थया वहिवर का सिणगार ॥ भजो ॥१४॥
चील तणे भव में धुन धरियो जपियो पाप अपार ॥ भजो ॥१५॥
काल करीने चील भी हाथी धरयो संयम अमर भवपार ॥ भजो ॥१६॥
राजपुरी नगरी नो बालक नाम अमर कुमार ॥ भजो ॥१७॥
जिम अग्नी में होम करंता, समरयो नवकार ॥ भजो ॥१८॥
अमर माती ने अमर कुमार रे, किनो सिंहासन गुलजार ॥ भजो ॥१९॥
सेठनी जहाज समुद्र पड़ंता सुमरीयो सुर करी वार ॥ भजो ॥२ ॥

प्रात उठीन नित-नित जपिये, ज्यूं आतम रो उद्धार ॥ भजो० ॥२१॥
सोवत जागत उठत वैठत, हिये धरो हर वार ॥ भजो० ॥२२॥
मत्र जत्र ने तन्त्र औषधि, सबसे अधिक उदार ॥ भजो० ॥२३॥
जगल झाड उजाड पहाड में मत्र वडो श्रीकार ॥ भजो० ॥२४॥

(६८)

नवकार मंत्र

भजो मन सार मत्र नवकार, ध्यान से उतरोगे भवपार ॥टेर॥

मैना सुन्दरी श्री पाल को, नवपद को आधार।
मन का मनोरथ पूरण हो गया, मिट गया कुष्ट विकार ॥ भजो० ॥ १ ॥
जलती आग सु नाग निकारयो, दियो पार्श्व नवकार।
हुआ धरणेन्द्र पद्मावती सरे, भुवनपति सरदार ॥ भजो० ॥ २ ॥
सेठ सुदर्शन शुली चढ़ता, जप्यो मत्र नवकार।
शूली मिटकर भयो सिंहासन, महिमा शील अपार ॥ भजो० ॥ ३ ॥
यही मत्र महा प्रभाविक, चौदह पूरब का है सार।
'लाल' कहे शुद्ध भाव से जपता, करते मगलाचार ॥ भजो० ॥ ४ ॥

विश्वप्रेम

विश्वात्मा प्रेम रूप है। प्रेम जगत के कण कण में समाया हुआ है। प्रेम की ज्योति से ही सूर्य-चन्द्र और तारागण प्रकाशमान हैं। प्रेम से ही जीवन की ज्योति जल रही है। जहाँ प्रेम नहीं है वहाँ प्राण नहीं है, जड़ता है, अज्ञानता है अन्धकार है। इसीलिए समस्त प्राणियों का चरम ध्येय प्रेम की विद्युत्-धारा की खोज करना है। जीवसृष्टि में जो अनवरत गति दिखाई पड़ती है वह प्रेम की प्राप्ति के लिए उनकी दौड़ है। जन्म जन्मान्तर इस अथक एवं अनन्त प्रयोग से पूर्ण हैं। एक मात्र प्रेमरूप परमात्मा से तादात्म्य पाने के लिए ही अणु अणु प्रयासी है। यह सतत प्रयास विश्व का परम पवित्र धर्म है। इससे विमुख होकर जीव-जगत् का कल्याण नहीं।

जीवन में प्रेम का जो सुन्दर झरना दिनरात निरन्तर झरता रहता है उसमें स्नानकरके आत्मा सुख शान्ति और शीतलता का अनुभव करता है। जहाँ प्रेम का जितना विशुद्ध प्रकाश है वहाँ उतना ही आकर्षण है। माता में पिता में स्त्री में पुत्र में मित्र में सहयोगी में आकर्षण का आधार यही प्रेमतत्त्व है। इसीके खिंचाव से एक दूसरे के पास खिंचे चले आते हैं। वह जीवन सचमुच ऊसर और अभागा है जो प्रेम-रस की वर्षा से वंचित रहा है।

प्रत्येक धर्म और सम्प्रदाय के धर्मग्रंथ आखिर इसी परिणाम पर पहुँचते हैं। सबके मतान्तर और विरोध यहीं आकर एक रूप ग्रहण कर लेते हैं। बाइबिल और कुरान अवेस्ता और वेद के विभेद आदि स्थापित करनेवाली यही विश्वभावना है। चींटी से हाथी तक इसके बन्धन से बद्ध हैं। हमारे सौरमण्डल के ग्रह और उपग्रह तक इस नैसर्गिक नियम

की अवहेलना करने मे अपना कल्याण नही देखते । यही कारण है ज्ञानोपजीवी मानव आदि काल से इसके महत्त्व की ओर आकर्षित रहा है। वह इसकी महिमा के आगे सम्मान से सिर झुकाने में कभी विरत नही हुआ है। सृष्टि के आदिम युग में प्राणि-प्रसार अपने विरल स्वरूप मे था। उस समय प्रेम की भावना के कसौटी पर इस तरह कसे जाने की आवश्यकता ही वहुत कम थी। उस समय प्रेम-प्रदर्शन एक सहज कर्तव्य था। किसी उल्लेखनीय त्याग के विना भी पारस्परिक सद्भाव सम्भव था। आज की प्राणि-सकुल सृष्टि में प्रेम का निर्वाह कठिन होता जा रहा है। अपने अपने अस्तित्व के लिए परस्पर सहार की भावना प्रवल हो रही ह। उस प्राचीनतम काल को सतयुग का नाम देकर हम आज भी उसके प्रति अपनी श्रद्धाजलि समर्पित करते हैं। हमारा आज का समय कलियुग कहलाता है। इस कलिकाल में सभी कुछ कठिन परीक्षा में से होकर गुजरे विना अपनी विशुद्धता प्रमाणित नही कर सकता।

ससार में प्रेम का दुष्काल इतना कभी नही पडा था। आज की दुनिया प्रेम के लिए तरस रही है। सृष्टि का कण कण उसके बिना छटपटा रहा है। कभी-कभी चेतना में यह अनुभूति घनीभूत होने लगती है कि प्रेम की मरीचिका प्राणी के लिए परम प्राप्य नही हो सकती। स्वार्थ को छोड देने से जीव का निस्तार नही है। दिन प्रतिदिन जहाँ सघर्ष की ज्वाला वढ़ती जा रही है वहाँ इसी तरह का अनास्थामय वातावरण वनने के सिवा और क्या हो सकता है। इसीका यह फल है कि दुनिया पथ-भ्रष्ट होकर प्रतिगामी बन रही हैं। घर घर में दीवारें खडी हो रही हैं। कोई वश और कुलीनता का दावा करके अपने को शेष से श्रेष्ठ बता रहा हैं। कोई धन के बल पर गरीबो को चूसने के वन्धेज वाँधता है। कोई धर्म की खाई खोद रहा है। कोई भाषा के आधार पर अपनी राष्ट्रीयता अलग खडी कर रहा है। पता नही यह प्रवृत्ति ससार को किधर ले जायगी ?

जब सावन की घनघोर श्यामवती काली घटाएँ आकाश में उमड़ती-घुमड़ती हैं तब भी वहीं विद्युत् के कर प्रकाश की दो चार रेखाएँ बिखेर ही देते हैं। इसी प्रकार प्रेम की विडम्बना के इस युग में भी उस पर आस्था रखनेवाले महात्माओं का अस्तित्व मौजूद है। प्रेम रूप विश्वात्मा की उपासना की यह शृंखला किसी काल में छिन्नभिन्न नहीं हुई है। बराबर रही आई है। उसने सदा इस पर अपनी अटूट श्रद्धा प्रदर्शित की है। बल्कि इन लोगों ने प्रेम के क्षेत्र को अधिक से अधिक विस्तार देने की रोचक कल्पना में विचरण करके समय को सार्थक किया है। इसी निरंतर प्रेम की आराधना द्वारा मनुष्य ने सहस्रों वर्ष से अब तक जो जो सुन्दर स्वप्न देखे हैं उनमें सबसे मनोहर स्वप्न है—विश्वप्रेम।

इसे हमने स्वप्न इसलिए कहा है कि यह अब तक विचारों और कल्पनाओं में ही रहा है। इसे मानसिक जगत् से बाहर प्रयोग की भूमि पर आने का बहुत कम अवसर मिला है। यदि यदा-कदा कभी मिला भी है तो वैयक्तिक जीवन तक ही इसकी सीमा रही है। भगवान महावीर, बुद्ध और ईसा ऐसे ही प्रातःस्मरणीय महापुरुष हैं जिन्होंने विश्वप्रेम को सुन्दर स्वप्न न रहने देकर अपने अपने जीवन में उतार लिया है। अपने जीवन से बाहर जनता जनार्दन ही नहीं बल्कि प्राणिमात्र के लिए उसका विस्तार किया है। उस सन्देश का जयघोष जहाँ तक गूँजा वहाँ तक एक नई सृष्टि का जन्म हुआ। नये नये आदर्श खड़े हुए। नये दृष्टिकोण का निर्माण हुआ। साहित्य शिल्प धर्म दर्शन और सदाचार को नई आँखें मिलीं। परन्तु यह प्रभावना व्यक्तिगत जीवन में जितनी उज्ज्वल हुई उतनी सार्वजनिक जीवन में चरितार्थ नहीं हुई। विरोधी शक्तियों के अवरोध के कारण या प्रतिकूल क्षेत्र में पड़ने से वह अपना क्षणस्थायी तात्कालिक चमत्कार दिखाकर सीमाबद्ध हो गई। परन्तु विचार शीलों ने सदा यह अनुभव किया है कि एक मात्र यही विश्वप्रेम ही सुखमय संसार के लिए, संसार के भीतर साकार स्वर्ग है। इस विषय में उन्होंने कभी अपने विश्वास

में शिथिलता नही आने दी। उनकी अटल धारणा है कि प्राणी यदि चाहे और प्रयत्नशील होकर इसकी आराधना में लग जाय तो वह विश्वात्मा की इस सबसे प्रिय विभूति से अपनी आत्मा का अभिषेक कर सकता है, और ससार के कल्याण का पथ प्रशस्त हो सकता है।

विश्वप्रेम के अन्तर्गत विश्व की व्याख्या में निश्चय ही केवल मनुष्य का समावेश नही होता। विश्व-ब्रह्माण्ड में बसनेवाले छोटे मोटे सभी प्राणी उसमें आ जाते हैं। शेष असमर्थ या निरीह लोगो को उससे वचित रक्खा गया हो। विश्वप्रेम की इतनी सकुचित व्याख्या करने से वह अपनी सार्थकता खो बैठेगा। जो लोग इसी सकुचित अर्थ में उसका प्रयोग करके अपने को विश्वबन्धुत्व का हिमायती मानते है वे वस्तुत विश्वप्रेमी न होकर मानव-प्रेमी हैं।

मानवप्रेमी होना भी सहज नही है। उसके लिए भी पर्याप्त त्याग और व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। परन्तु विश्व-बन्धुत्व के पथ का यह एक निर्देशक पत्थर मात्र है। वह महान साधना सहज सिद्ध नहीं हो सकती। वह एक बहुत लम्बा पथ है। अपने आदि काल से मानव इस ओर अग्रसर होने के लिए सचेष्ट है। कभी आगे बढता है कभी पीछे लौटता है। प्रयोग चल रहा है। सफलता और विफलता से विकास का पथ विस्तृत हो रहा है। समय-समय पर दिव्य आत्माएँ इसका सन्देश लेकर आती है। उनके आने से पथ आलोकित हो जाता है, फिर वह प्रकाश धूमिल होकर अन्धकार में डूब जाता है। परन्तु इसमें सन्देह नही कि इन प्रयोगो मे सत्य की परीक्षा हो जाती है और प्रति बार आलोक-रेखा से लिखे हुए ये लेख पढ़ने में आते हैं कि विश्व का कल्याण विश्वप्रेम की सुन्दर भावना में ही समन्वित है।

विश्वप्रेम विचार-साधना का वह तट है, जहाँ पहुँच जाने पर सब कुछ पीछे, बहुत पीछे, छूट जाता है। स्त्री, बच्चे, घर-परिवार, वश-जाति, समाज-राष्ट्र यहाँ तक कि मानवप्रेम भी विश्वप्रेम के पथ की ओर

अग्रसर होने के दूरी-निर्देशक-पत्थर (mile stones) मात्र हैं। जो साधक जितनी दूर तक चल चुका है, वह उद्देश्य के उतना ही समीप पहुँच गया है तो भी उद्दिष्ट स्थान अभी दूर है। आदर्श की प्राप्ति अभी शेष है। वहाँ पहुँचने के लिए आत्मा को जितना पवित्र कर लेने की आवश्यकता उतना अभी हम कहाँ कर सके हैं? जिस दिन कर सकेंगे उसी दिन हमारा अपना घर हमारा घर न होकर विश्व का प्रांगण ही हमारा घर होगा। उसी दिन ससार का क्षुद्र से क्षुद्र प्राणी और हिंसक से हिंसक जीव भी हमारे श्वास-श्वास का एक अंग होगा। हम अपने हृदय के प्रेमामृत को बिना अपने पराये के भेदभाव के समान भाव से सबके लिए प्रस्तुत कर सकेंगे। तब कोई पराया न होगा। कोई शत्रु न होगा। इधर उधर सब तरफ़ सब कुछ अपना ही अपना होगा।

प्रेमाचरण का व्यापार जब तक इतना विस्तृत नहीं हो जाता कि उसकी प्रतिध्वनि विश्व के कण-कण से ध्वनित हो उठे तब तक हमारा प्रयास अधूरा है। कुछेक कुटुम्बों तक जब तक यह भावना सीमित है तब तक विश्वभावना की सार्थकता अपने पूरे अर्थों में नहीं हुई। हमारे सामने एक नहीं अनेक दृष्टान्त मौजूद हैं, जब हिंसक जीवों ने भी महात्माओं और ऋषि-मुनियों के सहवास में प्रेम का व्यवहार किया है। इसलिए यह भी नहीं कहा जा सकता कि विश्वप्रेम कभी विश्वधर्म नहीं हो सकता। यदि इसके प्रचार और प्रसार करने की भावना को मनुष्य उसी प्रकार अपनाले जिस प्रकार उसने अनेक क्षुद्र बातों को जीवन में स्थान दिया है तो यह असम्भव भी सम्भव हो सकता है।

तथ्यवादियों की ओर से सदा ही इसका विरोध किया जाता रहा है। वे अपनी आँखों के आगे दिनरात भाई के द्वारा भाई का सर्वस्व हरण पिता के द्वारा बेटे के स्वार्थ का विरोध मित्र के द्वारा मित्र का घात देखते हैं। वे देखते हैं कि ससार स्वार्थ-युद्ध का ही पर्याय है। निस्वार्थ-उदारता उदारता के लिए उनकी समझ में नहीं आती। 'घर में दिया जलाये

विना मस्जिद म जलाने' की नीति उनके निकट कोरा आदर्शवाद है। जीवन मे वह कभी उतरते हुए देखा नही गया। यदि मान भी लें कि विश्वप्रेम ससार का धर्म हो जायगा तो उनका कहना है कि इससे दुनिया का परित्राण नही होगा। ससार की गति सायकिल के पहिये की तरह है। घूम फिर कर वह फिर अपने पूर्व स्थान पर आ जाती है। इस विश्व-प्रेम को विस्तार देने की प्रतिक्रिया यह होगी कि जीवन की समस्या पहले मे भी अधिक उग्र रूप ग्रहण करेगी और प्रचड स्वार्थवाद फैलेगा। यदि सभी विश्वप्रेमी वन जायेंगे तो वह दिन दूर न होगा जव जीवनोपयोगी पदार्थों का अभाव प्रतीत होने लगेगा। भूखी प्यासी दुनिया तव न जाने क्या क्या अकाड ताण्डव करेगी ? इस प्रत्यक्ष सत्य से आँख मूँदकर हम कैसे इसका समर्थन कर सकते हैं ? यह एक आदर्श और सुन्दर भावना अवश्य है और इसका ध्यान सम्पन्न-जीवन के मनोरजन का विषय भी है। इसी कारण इसकी परिधि सर्वत्यागी महात्माओ या साधनसम्पन्न, सुखी और विचारशील गृहस्थो तक ही रही है। वही इसकी शोभा है। जैसे अपने वृन्त से च्युत होकर एक सुन्दर फूल की दुर्दशा होती है, उसी तरह विश्वप्रेम रूपी आकाशकुसुम को भी यथार्थ जीवन की कठोर धरित्री पर ले आने में सम्भव है।

यह ठीक है, परन्तु विश्वप्रेम के समर्थक तथाकथित सम्भावित परिणाम का दायित्व अपने से अधिक समर्थ उस महाशक्ति के कन्धो पर रखना अच्छा समझते है, जिसने विश्वकल्याणकारी इस मनोहर भावना का उनके अन्तर में प्रकाश किया है। जव वे अपने लिए जीने का प्रश्न लेकर नहीं चलते तो जीवनरक्षा के साधनो की चिन्ता में व्यग्र क्यो हो ? उनका यह उत्तर सवसे वडा उत्तर है। यदि इससे भी विपक्षियो को सन्तोष नही हो सकता तो विश्वप्रेम के अपने ही जैसे सुन्दर परिणाम तक उन्हें प्रतीक्षा करनी होगी। कारण, जीवन की वर्तमान व्यवस्था एक सघर्ष है और इसका शान्तिपर्व है—विश्वप्रेम।

श्री आचार्य देव का प्रवचन

श्री जगद्गुरु आचार्यदेव श्री श्री श्री १ [illegible] श्री श्री विजयशान्ति सूरीश्वरजी
महाराज साहेब का प्रवचन

महात्मनां कीर्तनं हि श्रेयः श्रेयस्करम् ।

अर्थ—महापुरुषों का गुणगान कीर्तन भक्ति आदि करना कल्याण और मोक्षपद का हेतु है ।

—हेमचन्द्राचार्य वचनामृत सर्ग १

क्षणमपि सज्जन संगतिरेका भवति भवार्णव तरणे नौका ।

अर्थ—केवल एक क्षण की भी महापुरुष की संगति संसार सिन्धु को तैरने के लिये नौका रूप है ।

जइ जिणमयं पवज्जह ता मा ववहारणिच्छए मुयह ।
एक्केण विणा छिज्जइ तित्थं अण्णेण उण तच्चं ॥

अर्थ—यदि तुम जिनमत स्वीकार करना चाहते हो तो व्यवहार और निश्चय दोनों में एक का भी त्याग न करो । व्यवहार के बिना तीर्थ एवं आचार का उच्छेद हो जाता है और निश्चय बिना तत्त्व ही का विनाश हो जाता है ।

(आगमसार)

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि ।
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ॥
जातोऽस्मि तेन जनबान्धव ! दुःखपात्रं ।
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः ॥

अर्थ—हे प्रभो ! मैने आपके वचनो को सुना है, आपकी पूजा भी की है, और आपके दर्शन भी किये है किन्तु निश्चय ही मैने आपको अपने हृदय मे धारण नही किया। हे विश्वबान्धव ! इसी कारण मैं दु खपात्र बना हुआ हूँ। सच है, भावशून्य क्रियाएँ फलवती नही होती।

—कल्याणमन्दिर

जिसे उथले तालाब का स्वच्छ पानी पीना है, उसे हल्के हाथ से जल लेना होगा। यदि थोडा सा भी पानी हिल गया तो नीचे का सब मैल ऊपर चला आयेगा और सारा पानी गँदला हो जायगा। इसी प्रकार यदि तुम पवित्र रहना चाहते हो तो विश्वास और सावधानी के साथ ईश्वर से प्रेम करो। व्यर्थ के विवादो में अपना समय नष्ट न करो, नही तो नाना प्रकार की शका-प्रतिशकाओ से तुम्हारा मस्तिष्क गन्दा हो जायगा।

अपि पौरुषमादेय शास्त्र चेद्युक्ति बोधक
मन्यत्त्वार्ष मपि त्याज्य भाव्य न्यायैकसेविनाम्।
युक्तियुक्तमुपादेयं वचन बालकादपि
अन्यत्तृणमिव त्याज्यमप्युक्त पद्मजन्मना ॥

अर्थ—न्याय-प्रिय व्यक्ति को मानव-कृत शास्त्र भी, यदि युक्ति-बोधक हो तो, स्वीकार करना चाहिए एव युक्ति-शून्य-शास्त्र को, चाहे वह प्राचीन ऋषि, महर्षियो का ही कहा हुआ क्यो न हो, छोड देना चाहिये। युक्ति-सगत बात बालक की भी स्वीकार करनी चाहिये एव युक्तिहीन बात को, ब्रह्मा की भी कही हुई हो तो, तृण की तरह त्याग देनी चाहिये।

—वशिष्ठ विचार

जं अन्नाणी कम्म खवेइ पुव्वाहि वास कोडीहिं।
त नाणी तिगुत्तो खवेइ उस्सासमेत्तेण ॥

अर्थ—अज्ञानी जीव जिस कर्म को करोडो पूर्व वर्षों में क्षय करता है, ज्ञानी पुरुष उसी कर्म को एक श्वासोच्छ्वास में क्षीण कर देता है।

नाशाम्बरत्वे न सिताम्बरत्वे
न तत्त्ववादे न च तर्कवादे।
न पक्षसेवा श्रयणेन मुक्तिः
कषायमुक्तिः किल मुक्तिरेव॥

पाठान्तरे—न च संयमे न च मौने न च तपसि
कषाय मुक्तिः किलमुक्तिरेव।

भावार्थ—दिगम्बर अथवा श्वेताम्बर अवस्था में मोक्ष नहीं है। तत्त्ववाद अथवा तर्कवाद से भी आत्म-कल्याण नहीं होता। पक्ष विशेष का आश्रय लेने से आत्मा की शुद्धि नहीं होती न संयम मौन और तप से ही आत्मा की मुक्ति होती है। किन्तु कषायों का त्याग करने से ही आत्मा की शुद्धि एवं मुक्ति होती है।

—उपदेश तरंगिणी

मासोपवास निरतोऽस्तु तनोतु सत्यं
ध्यानं करोतु विदधातु बहिर्निवासम्।
ब्रह्मव्रतं धरतु भैक्ष्यरतोऽस्तु नित्यं
रोषं करोति यदि सर्वं मनर्थकं तत्॥

अर्थ—चाहे मास-मास के उपवास करो सत्य बोलो खूब ध्यान ध्याओ बाहर वन में निवास करो ब्रह्मचर्य का पालन करो और सदा भिक्षा से निर्वाह करो। किन्तु यदि मनुष्य क्रोध करता है तो ये सभी व्रत अनुष्ठान निष्फल हैं।

—ज्ञानसार अष्टक

मासे मास च जो बालो कुसग्गेणं तु भुंजए।
न सो सुयक्खाय धम्मस्स कलं अग्घइ सोलसिं॥

अर्थ—जो अज्ञानी जीव मास-मास की तपस्या करता है और कुशाग्र

परिमाण आहार से पारणा करता है। इतनी कठोर तपस्या करनेवाला भी सर्वज्ञ-भाषित सर्वविरति-धर्म की सोलहवीं कला को प्राप्त नहीं करता।

—उत्तराध्ययन, ९वां अध्ययन

अवश्य नाशिनो वाह्यस्यागस्यास्य कृते तत।
कोप कार्यो नान्तरङ्ग ध्रुव धर्मघनापह ॥

अर्थ—अवश्य ही नाश होनेवाले इस वाह्य शरीर के लिये कोप न करना चाहिये क्योंकि यह आभ्यन्तर धर्म रूप धनका नाश करनेवाला है।

—भावविजयगणि कृत, उत्तराध्ययन-सूत्र टीका अ० २५

ब्रह्मचारी गृहस्थो वा वानप्रस्थो यतिस्तथा।
सर्वेते च शमेनैव प्राप्नुवन्ति परा गतिम् ॥

अर्थ—चाहे ब्रह्मचारी हो या गृहस्थ हो अथवा वानप्रस्थ हो या यति हो—ये सभी शम अर्थात् शान्ति द्वारा ही उत्तम गति को प्राप्त करते हैं।

—इतिहास समुच्चय, अ० ८, श्लोक ३४

To forget is human but to forgive is divine

अर्थ—भूल जाना मनुष्य का स्वभाव है किन्तु क्षमा देना ईश्वरीय गुण है।

—शेक्सपीयर

प्रणिहन्ति क्षणार्धेन साम्यमालम्ब्य कर्म तत्।
यन्न हन्यान्नरस्तीव्र तपसा जन्मकोटिभिः ॥

अर्थ—जिस कर्म को मनुष्य करोडो जन्म तक तीव्र तप करके भी नाश नही कर सकता उसी कर्म को समता भाव का आलम्बन लेकर आत्मा आधे क्षण में नष्ट कर देता है।

—तत्त्वामृत

पठन्ति वेदशास्त्राणि धर्मशास्त्रं मीमांसकाः।
आत्मतत्त्वं नैव जानन्ति सूपपाके दर्वी यथा॥

भावार्थ—जो लोग वेदशास्त्र धर्मशास्त्र मीमांसा आदि सभी कुछ पढ़ लेते हैं किन्तु आत्मा का स्वरूप नहीं जानते वे लोग हलुए में रही हुई कुड़छी समान हैं। कुड़छी हजारों मन हलुआ हिलाती है पर हलुआ का स्वाद वह नहीं जानती। इसी प्रकार उपरोक्त आध्यात्मिक शास्त्रों के पढ़ जाने के बाद भी यदि पण्डित लोगों को आत्मतत्त्व का ज्ञान नहीं होता तो फिर उस कुड़छी की अपेक्षा उनमें क्या विशेषता है।

यस्य देवे परा भक्तिः यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः॥

अर्थ—जिस पुरुष की अपने इष्ट देव में परम भक्ति होती है और जैसी देव में भक्ति होती है वैसी ही गुरु में होती है उस महात्मा पुरुष के हृदय में कहे हुए ये सभी अर्थ प्रकाशमान होते हैं।

—श्वेताम्बर उपनिषद्

सव्वे पाणा पियाउया सुहसाया दुक्खपडिकूला, अप्पियवहा, पियजीविणो जीविउकामा सव्वेसिं जीवियं पियं (तम्हा) णातिवाएज्ज किंचणं।

अर्थ—सभी जीवों को अपनी आयु प्रिय है, वे सुख चाहते हैं और दुःख से द्वेष करते हैं उन्हें वध अप्रिय लगता है और जीवन प्रिय लगता है अतएव वे दीर्घ आयु चाहते हैं। सभी को जीवन प्रिय है। इसलिये किसी भी जीव के प्राणों का नाश न करना चाहिये।

—आचारांग सूत्र

सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे जीवा सव्वे सत्ता न हंतव्वा न अज्जावेयव्वा न परिघेत्तव्वा न परितावेयव्वा न उद्दवेयव्वा। एस धम्मे धुवे णिइए सासए समिच्च लोयं खेयन्नेहिं पवेइए।

अर्थ—सर्व प्राण भूत जीव और सत्त्व का हनन न करना चाहिये, उन पर अनुशासन न करना चाहिये, उन्हें ग्रहण न करना चाहिये, परिताप न देना चाहिये तथा प्राणो से नियुक्त न करना चाहिये। यह अर्थ ध्रुव नित्य और शाश्वत है। पट्कार्य लोक के स्वरूप को सम्यक् प्रकार से जानकर तीर्थंकर भगवान् ने इस धर्म का उपदेश दिया है।

—आचाराग सूत्र

जयणा धम्मस्स जणणी।

अर्थ—यातना—दया धर्म की माता है।

—भगवती सूत्र

जइविय णिगणे किसे चरे जइविय भुजिय मासमतसो।
जे इह मायाइ मिज्जई आगता गव्भाय णतसो॥

अर्थ—चाहे कोई नग्न रहे, वस्त्र के न होने से उसका शरीर क्षीण हो जाय, अथवा कोई मास-मास के अन्त मे भोजन करे किन्तु यदि वह माया तथा अन्य कषायो से युक्त है तो उसे अनन्त बार गर्भवास प्राप्त करना होगा।

—सूत्रकृताग, २ अध्ययन

न वि मुण्डिएण समणो।

अर्थ—मुडन करा लेने से ही कोई साधु नही बन जाता।

—उत्तराध्ययन, २५ अध्ययन, गाथा ३१

समयाए समणो होइ।

अर्थ—जिसमें समता भाव है वही साधु है।

—उत्तराध्ययन, २५ अध्ययन गाथा ३२

नत्थि चरित्त सम्मत्तविहूणं।

अर्थ—श्रद्धा बिना चारित्र नही है।

—उत्तराध्ययन, २८ अध्ययन

जिम जिम बहुश्रुत भण्यो बहुशिष्ये परिवर्यो ।
तिम तिम जिन शासन नो वैरी जो निश्चय हृदय नवि धर्यो ।

अर्थ—यदि हृदय में निश्चय-आत्मस्वरूप धारण न किया तो ज्यों ज्यों बहुत शास्त्रों का अध्ययन किया बहुत से शिष्यों से घिरा रहा त्यों त्यों जिन शासन का शत्रु होता गया ।

अप्पणा सच्चमेसिज्जा मित्तिं भूएसु कप्पए ।

अर्थ—आत्मा द्वारा सत्य की गवेषणा करे एवं प्राणियों के साथ मैत्री भाव रखे ।

—उत्तराध्ययन अ ६, गाथा २

पापवत्स्वपि जीवेषु स्वकर्म निहतेष्वलम् ।
अनुकम्पैव सत्त्वेषु न्याय्य धर्मोऽयमुत्तमः ॥

अर्थ—व्याध कसाई आदि पापी प्राणी अपने कर्मों से ही मरे हुए हैं । ऐसे जीवों पर भी द्वेष न रखते हुए अत्यन्त अनुकम्पा भाव रखना यही श्रेष्ठ न्याय्य धर्म है ।

सोही उज्जुयभूयस्स धम्मो सुद्धस्स चिट्ठइ ।

अर्थ—जिसकी आत्मा सरल और भद्र है उसी की शुद्धि होती है और शुद्ध आत्मा में ही धर्म रहता है ।

—उत्तराध्ययन सूत्र

अंजू समाहि ।

अर्थ—जहाँ सरलता है वहाँ आत्म-समाधि है ।

—सूत्रकृतांग

द्रव्य क्रिया रुचि जीवड़ा जी भावधर्म रुचि हीन ।
उपदेशक पण तेहवा जी शुं करे जीव नवीन ॥

—चंद्रानन स्वामीए अरदास ।

भावार्थ—जीवो मे द्रव्य क्रिया करने की रुचि है, भावधर्म पर उनकी अरुचि है। फिर उपदेश देनेवाले भी उन्हें वैसे ही मिल गये। अब जीव नवीन क्या कर सकता है ?

—श्री देवचन्द्रजी महाराज

चउव्विह ठाणेहिं जीवा मणुस्सत्ताते कम्म पगरेंति तजहा पगइ भद्दयाए, पगइविणीययाए, साणुक्कोसयाए, अमच्छरियाए।

अर्थ—चार स्थानो से जीव मनुष्यायु योग्य कर्म बाँधते हैं, जैसे—भद्र प्रकृति होने से, स्वभावत विनम्र होने से, अनुकम्पा सहित होने से और मात्सर्य का त्याग करने से।

—स्थानाग सूत्र ४, सूत्र ३७३

तहारूवाण समणाण णिग्गथाण एगे वयण गिण्हन्ति सिज्झन्ति, बुज्झन्ति, मुच्चन्ति परिनिव्वायति सव्व दुक्खाणमत करेन्ति।

अर्थ—एक एक पुरुष तथा रूप श्रमण निर्ग्रन्थो के वचन ग्रहण करते है। वे सिद्ध, वुद्ध और मुक्त होते है, निर्वाण को प्राप्त करते हैं एव सभी दु खो का नाश करते है।

—स्थानागसूत्र

अहिंसा सत्य मस्तेय शौचमिन्द्रिय निग्रह।
एतं सामासिक धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनु ॥

भावार्थ—अहिसा, सत्य, अचौर्य, लोभत्याग एव इन्द्रिय-जय सक्षेप में यह धर्म मनु ने चारो वर्णों के लिये कहा है।

—मनु

पाणातिपातवेरमणि मुसावादवेरमणि अदिन्नादाणवेरमणि,
सुरा मेरेय मज्ज पमायत्थान वेरमणि कामेसुमिच्छाचार वेरमणि ॥

भावार्थ—प्राणातिपात (जीवहिसा) का त्याग, मृषावाद (असत्य)

का त्याग अदत्तादान (चोरी) का त्याग सुरा मदिरा आदि प्रमाद स्थानों का त्याग इन्द्रिय विषयों में स्वेच्छाचार का त्याग।

—बौद्धमत

Mose's commandments are:—

Thou shalt not kill, not bear false witness, not steal, not commit adultery not covet anything that is thy neighbour's.

भावार्थ—ईसा मसीह की ये आज्ञाएँ हैं—तू किसी को न मारना किसी की झूठी गवाही न देना चोरी मत करना व्यभिचार न करना और अपने पड़ोसी की किसी चीज की इच्छा न करना।

—ईसा मसीह

Slay none, God has forbidden it, except justice requires it, And avoid false words, woman and man who steal shall lose their hands. Intoxicants are satan's own device. They who avoid unlawfulness in sex and watchfully and resolutely control their senses, they alone achieve success.

भावार्थ—किसी की हत्या न करो। ईश्वर ने हत्या करना मना किया है बशर्ते कि न्याय के लिये वैसा करना जरूरी हो। असत्य भाषण का त्याग करो। जो स्त्री पुरुष चोरी करते हैं उनके हाथ नष्ट हो जायेंगे। नशा करनेवाले लोग शैतान की ही प्रतिमूर्ति हैं। जो स्त्री पुरुषों के अनैतिक सम्बन्ध का परिहार करते हैं और सावधानी के साथ दृढ़ता पूर्वक अपनी इन्द्रियों का दमन करते हैं केवल वे ही लोग सफलता प्राप्त करते हैं।

—इस्लाम

यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः।

अर्थ—धर्म वह है जिससे विकास एव कल्याण की प्राप्ति हो।

—वैशेषिक सूत्र

धम्मो मगलमुक्किट्ठं अहिंसा सजमो तवो।
देवा वि त नमसति जस्स धम्मे सया मणो॥

भावार्थ—धर्म सर्वश्रेष्ठ मगल है। अहिंसा सयम और तप धर्म के प्रकार है। जिस पुरुष का चित्त सदा धर्म मे लगा रहता है उसे देवता भी मस्तक झुकाते है।

—दशवैकालिक द्रुमपुष्पिकाध्ययन

कुल ता लो इला कलामातिन सवाइन बैनाना वा बैना कुम।

भावार्थ—आओ, हम सभी ऊपर उठें और सर्व सम्मत महान् सत्य एव सिद्धान्तो के आधार पर एक दूसरे से मिलें।

—कुरान

Whatever things have been rightly said, among all men, are the property of us Christians

भावार्थ—अखिल मानव जाति में, जो भी बातें यथार्थ रूप से कही गई है वे सभी हम क्रिश्चियन लोगो की सम्पत्ति है।

(The place of Christianity in the Religions of the world)

गवामनेक वर्णाना क्षीरस्यास्त्येकवर्णता।
क्षीरवत्यश्यत ज्ञान लिगिनस्तु गवा यथा॥

भावार्थ—जैसे गायें जुदे जुदे रग की होती है किन्तु उन सभी का दूध एक ही रग का यानी सफेद होता है। इसी तरह मतानुयायी भी गायो की तरह अनेक प्रकार के हैं किन्तु उन सभी का ज्ञान दूध की तरह एक ही प्रकार का है।

—उपनिषद्

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ ! सर्वशः ।

भावार्थ—हे अर्जुन ! सर्वत्र मनुष्य मेरे ही मार्ग का अनुसरण कर रहे है ।

—गीता

तुमंसि नाम सच्चेव जं हंतव्वंति मन्नसि तुमंसि नाम सच्चेव जं अज्जावेयव्वंति मन्नसि तुमं सि नाम सच्चेव जं परियावेयव्वंति मन्नसि तुमं सि नाम सच्चेव जं परिघेतव्वं ति मन्नसि एवं तुमं सि नाम सच्चेव जं उद्दवेयव्वंति मन्नसि ।

भावार्थ—जब तुम किसीको हनन आज्ञापन परिताप परिग्रह एवं विनाश योग्य समझते हो तो यह विचार करो कि वह तुम ही हो । उसकी आत्मा और तुम्हारी आत्मा एक सी है । तुम्हें जैसे हननादि अप्रिय है और तुम उनसे बचना चाहते हो उसी प्रकार उसकी आत्मा को भी समझो ।

—आचारांग लोकसाराध्ययन

मनुष्य यह विचार किया करता है कि मुझे जीने की इच्छा है मरने की नहीं सुख की इच्छा है दुःख की नहीं । यदि मैं अपनी ही तरह सुख की इच्छा करनेवाले प्राणी को मार डालूं तो क्या ये बातें उसे अच्छी लगेंगी ?

—बुद्धगीता

सव्वे जीवा वि इच्छंति जीविउं न मरिज्जिउं ।
तम्हा पाणिवहं घोरं निग्गंथा वज्जयंति णं ॥

भावार्थ—सभी जीव जीना चाहते है मरना कोई नहीं चाहता । अतएव प्राणी-हिंसा को भीषण समझकर मुनि लोग उसका त्याग करते हैं।

—दशवैकालिक-महाचारकथा-अध्याय

तुझे कोई गाली दे और गाली ही नहीं तेरे गाल पर कोई थप्पड़ मार दे या पत्थर या हथियार से तेरे शरीर पर कोई प्रहार करे, तो भी

तेरे चित्त में विकार नही आना चाहिये, तेरे मुंह से गन्दे शब्द नही निकलने चाहिये, तेरे मन में उस समय भी तेरे शत्रु के प्रति अनुकम्पा और मैत्री का भाव रहना चाहिये और किसी भी हालत में क्रोध नही आना चाहिये।

—मज्झिमनिकाय

Resist not evil, if any smite thee on the right cheek, turn the left to him as well Bless them that curse you Love your enemies and pray for those who persecute you

भावार्थ—बुराई से बुराई को न रोको। यदि कोई तुम्हारे दाहिने गाल पर थप्पड मारे तो तुम बायाँ गाल भी उसकी ओर फेर दो।
जो तुम्हें शाप देते है उनके लिये तुम शुभ कामना करो। अपने शत्रुओ से प्रेम करो और जो तुम पर अत्याचार करते हे उनके लिये तुम प्रार्थना करो।

—ईसा मसीह

यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मान, ततो न विजिगुप्सते। ततो न विचिकित्सते॥

भावार्थ—जो सभी प्राणियो को अपने आत्मा में देखता है और अपने आत्मा को सभी प्राणियो मे देखता है। वह किसी से द्वेष नही करता और न उन पर सन्देह ही करता है।

—उपनिषद्

अफजलुल ईमाना अन्तो हिब्बा लिनन्नासे मा तो हिब्बो लिनफ्सेका, वा तरब्रो लहुम लहुमा मा तरब्रो हा लिनफ्सेका।

भावार्थ—सर्वोत्तम धर्म यह है कि तुम अपने लिये जो चाहते हो वही तुम दूसरो के लिये भी पसन्द करो और अपने लिये जिसको तुम दुखदायी समझते हो उसे दूसरो के लिये भी वैसा ही समझो।

—हदीस

श्रूयतां धर्म सर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम् ।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ॥
न तत्परस्य कुर्वीत स्यादनिष्टं यदात्मनः ।
यद्यदात्मनि चेच्छेत् तत्परस्यापि चिन्तयेत् ॥

भावार्थ—जो बातें आत्मा के लिये प्रतिकूल हैं उनका दूसरों के प्रति आचरण न करना—यही धर्म का सर्वस्व है । इसे सुनो और समझो । जो तुम्हारे लिये अनिष्ट है—जिसे तुम अपने लिये किया जाना नहीं चाहते उसे तुम दूसरों के लिये भी कभी न करो । जो तुम्हें इष्ट है, जिसे तुम अपने लिये चाहते हो उसकी तुम दूसरों के लिये भी इच्छा करो ।

—महाभारत

No man liveth unto himself We are all parts of one another God hath made of one blood all nations that dwell upon the face of the earth.

भावार्थ—मानव अपने लिये जीवन धारण नहीं करता हम सभी एक दूसरे के अवयव हैं परमात्मा ने उन सभी राष्ट्रों को एक ही खून से बनाया है जो इस भूतल पर निवास करते हैं ।

जो व्यक्ति अपने बायें हाथ को गन्दा होने देता है और अपने दाहिने हाथ से उसकी सफाई नहीं करता वह शीघ्र ही अपनी देह के सभी अवयवों को मैला कर देगा । अवयवों के सिवा पूर्ण अवयवी है ही क्या ? वे ही तो उसका निर्माण करते हैं और मनुष्य शरीर भी क्या है ? केवल अवयव ही तो । तब फिर प्रत्येक अवयव को प्रत्येक दूसरे अवयव की सार सँभाल क्यों न करनी चाहिये ?

—महात्मा बुद्ध

अमघुन ईमान उन पका नक्कमिता बा मपक्रास ईमाने उन पसल मुसिता । बिमनिमाने का व ययेका ।

भावार्थ—सर्वश्रेष्ठ धर्म यही है कि दूसरे प्राणी तुझसे अपने आपको सुरक्षित समझें। यही सर्वोच्च इस्लाम है कि तेरे मुख और हाथो से सभी अपने को सही सलामत महसूस करें।

—कुरान

अहिंसा प्रतिष्ठाया तत्सन्निधौ वैरत्याग ।

भावार्थ—अहिसा की सिद्धि होने पर वैर का अभाव हो जाता है।

—योग सूत्र

तत्राहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानभिद्रोह ।

भावार्थ—सदा के लिये सब प्रकार से सभी प्राणियो पर द्वेष भाव का न होना ही अहिसा है।

—योगभाष्य

उत्तरे च यम नियमास्तन्मूलास्तत्सिद्धि परतयैव तत्प्रतिपादनाय प्रतिपाद्यन्ते तदवदातकरणायैवोपादीयन्ते ।

भावार्थ—अहिसा के बाद कहे जानेवाले सत्य आदि यम और नियम सभी का मूल अहिंसा है। अहिंसा का प्रतिपादन करने के लिये ही उनका प्रतिपादन किया जाता है। अहिसा को विशुद्ध करने के लिए ही उनका आचारण किया जाता है।

—योगभाष्य

पचेन्द्रियाणि त्रिविध बल च उच्छ्वास नि श्वास मथात्पदायु ।
प्राणा दशैते भगवद्भिरुक्ता स्तेषा वियोजीकरण तु हिसा ॥

भावार्थ—पांच इन्द्रियां, मन, वचन और काया, श्वासोच्छ्वास तथा आयु ये दस प्राण है और इन्हे जुदा करना हिसा है।

—जैनशास्त्र

Perfect love casteth out fear

अर्थ—पूर्णप्रेम भय को भगा देता है।

—बाइबिल

Beloved, let us love one another, for love is of God, and everyone that loveth is born of God and knoweth God He that loveth not, knoweth not God For God is love

भावार्थ—प्यारे, हम परस्पर प्रेम करें, क्योंकि प्रेम ही परमात्मा है। जो व्यक्ति प्रेम करता है वह परमात्मा की सन्तान है और वह उसे जानता है। जो प्रेम नही करता, वह परमात्मा को भी नही जानता क्योंकि वह प्रेमरूप है।

—बाइबिल

God is love in essence Love is God in solution In so much as we love we are in God and God is in us, and in so far as we do not love, we are without God, in this world or any other The ideal church of all religions and philosophies is the same It is the union of all who love in the service of all who suffer.

भावार्थ—परमात्मा प्रेम का सूक्ष्म-सार-रूप है और प्रेम परमात्मा का स्थूल रूप है। जितने अंशो में हम प्रेम करते हैं उतने ही अंशो में हम परमात्मा में और परमात्मा हमारे आत्मा में है और जितने अंशो में हम प्रेम नहीं करते, हमारी आत्मा, इस विश्व मे या अन्यत्र कही भी, परमात्मा से वञ्चित है। सभी धर्म एवं दर्शनशास्त्रो का आदर्श आराधना मन्दिर यही है। दुःखी जीवो की सेवा करनेवाले महात्मा पुरुषो का यही सम्मिलन केन्द्र है।

—एक पाश्चात्य लेखक

सव्वभूयप्पभूयस्स सम्मं भूयाइं पासओ ।
पिहियासवस्स दंतस्स पावं कम्मं न बंधइ ॥

भावार्थ—जो सभी प्राणियों को आत्मा के समान समझता है उन्हें सम्यक्-शास्त्रोक्त विधि अनुसार देखता है अर्थात् उनकी यातना नहीं करता है नवीन कर्म प्रवाह को रोकता है एवं पाँचों इन्द्रियों का दमन करता है, उसके पाप कर्म का बन्ध नहीं होता ।

—दशवैकालिक षड्जीवनिकाध्ययन

Love. God with all thy heart. .soul. mind Love thy neighbours as thy self (God). On these two commandments hang all the law and the prophets

भावार्थ—हृदय की पूर्ण श्रद्धा के साथ परमात्मा से प्रेम करो । परमात्मा के प्रेम में अपने आत्मा और मन को लगा दो । पड़ोसियों से ठीक उसी तरह प्रेम करो जैसा कि तुम अपनी आत्मा से (परमात्मा से) प्रेम करते हो । सभी नियम और पैगम्बरों का आधार ये ही दो आज्ञाएं हैं ।

—बाइबिल मैथ्यू

He that loveth another hath fulfilled the law For this thou shalt not commit adultery not kill, not steal not bear false witness, not covet; and if there be any other commandment; it is (all) briefly comprehended in this saying namely Thou shalt love thy neighbour as thyself. Love worketh no ill to his neighbour Love is the fulfilling of the law

भावार्थ—जो दूसरे से प्रेम करता है उसीने नियमो का परिपालन किया है। व्यभिचार न कर, हिसा न कर, चोरी न कर, झूठी गवाही न दे, आसक्ति न रख—इनका तथा यदि और भी कोई आज्ञा हो तो उसका भी, सक्षेपत इस कथन में समावेश हो जाता है कि पडोसी को आत्मवत् समझ कर उससे प्रेम कर। प्रेम अपने पडोसी का बुरा नही करता। प्रेम करना नियमो का पालन करना है।

—बाइबिल रोमन्स

खामेमि सव्वे जीवा सव्वे जीवा खमतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु वेरं मज्झ न केणइ॥

भावार्थ—मैं सभी जीवो से क्षमा चाहता हूँ। सभी जीव मुझे क्षमा करें। सभी प्राणियो के साथ मेरा मैत्रीभाव है। किसी के भी साथ मेरा वैरभाव नही है।

—आवश्यक सूत्र

Seek to be in harmony with all your neighbours, live in amity with your brethren

भावार्थ—अपने सभी पडोसियो से मेल रखो और बन्धुओ के साथ प्रेमपूर्वक रहो।

(C Shu King)

अल खुलक़ो अल इलाही, फा अहब्बुल खलक़ी इल इलाही मान अहसान इलाहुलइलाही।

भावार्थ—सभी प्राणी ईश्वर के परिवार रूप हैं। और वही ईश्वर को सबसे अधिक प्यारा है जो उसके परिवार के साथ अधिकाधिक भलाई करता है।

—हदीस

मेत्तञ्च सब्बलोकस्मिं मानसं भावये अपरिमाणं।
उद्धं अधो च तिरियञ्च असम्बाधं अवेरं असपत्तं॥

भावार्थ—सारे लोक में ऊपर नीचे और तिर्छे—सभी जगह सभी प्राणियों में बाधा एवं वैर रहित असपत्न असीम मैत्री भाव की वृद्धि करो।

—सुत्तनिपात मेत्तसुत्त

To the good I would be good, and to the not good I would also be good, in order to make them good. To those who are sincere I am sincere; and to those who are not sincere I am sincere; thus all grow to be sincere.

भावार्थ—जो लोग भले हैं उनके प्रति मैं भला रहूंगा और जो भले नहीं हैं उनके प्रति भी मैं इस ख्याल से भला रहूंगा कि वे भी भले बन जायें। इसी प्रकार जो आदमी खरे हैं उनके साथ मैं खरा बर्ताव करूंगा और जो खरे नहीं हैं उनके साथ भी मेरा बर्ताव खरा ही रहेगा ताकि हम सभी खरे बन जायें।

(Chuang-tse)

Love your enemies, bless them that curse you, do good to them that hate you, and pray for them which despitefully use you and persecute you;
.for if you love them which love you, what reward have ye? Do not even the publicans the same.

भावार्थ—शत्रुओं से प्रेम करो जो तुम्हें शाप देते हैं उन्हें आशीर्वाद दो जो तुमसे द्वेष करते हैं उनका भला करो जो तुम्हारे साथ घृणा का बर्ताव करते हैं या तुम पर अत्याचार करते हैं उनके लिये परमात्मा से प्रार्थना

करो। क्योकि यदि तुम उन लोगो से प्रेम करते हो जो तुम्हें चाहते हैं तो तुम्हें क्या पारितोपिक मिलेगा ? क्या (पब्लिकन) भी ऐसा नही करते ?

——बाइबिल

Take no thought, what shall we eat ? What shall we drink? But seek first His Kingdom and His righteousness, and all these things shall be added unto you.

भावार्थ—हम क्या खायेंगे ? क्या पियेंगे ? इसका ख्याल भी न करो। किन्तु सर्वप्रथम परमात्मा के साम्राज्य एव उसकी भलमनसाहत की खोज करो और ये सभी चीजें तुम्हें स्वत सुलभ हो जायेंगी ?

——बाइबिल

आत्मा वा अरे श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्य, नान्योऽतोऽस्ति विज्ञाता।

भावार्थ—श्रवण, मनन एव निदिध्यास का विषय आत्मा ही है, इसके सिवा और कोई विज्ञाता नही है।

——उपनिषद्

Great heaven is intelligent, clear seeing, [and] is with you in all your doings

भावार्थ—बुद्धिमत्तापूर्वक वस्तु स्वरूप का स्पष्ट दर्शन ही महान् स्वर्ग है और वह तुम्हारे सभी कार्यों में तुम्हारे साथ रहता है।

(C Shu King)

Behold, the kingdom of God is within you Know ye not that ye are the temple of God, and the spirit of God dwelleth in you

भावार्थ—देखो परमात्मा का साम्राज्य तुम्हारे ही अन्दर है। क्या तुम नहीं जानते कि तुम ही परमात्मा के मन्दिर हो और उसकी शक्ति तुम्हीं में निवास करती है ?

—बाइबिल

अप्पा कत्ता विकत्ता य दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्त ममित्तं च दुप्पट्ठिय सुपट्ठिओ॥

भावार्थ—सदनुष्ठान रत आत्मा सुख देनेवाला और दुःख दूर करने वाला है और दुराचार प्रवृत्त वही आत्मा दुःख देनेवाला और सुखों का छीननेवाला हो जाता है। सदनुष्ठान रत आत्मा ही उपकारी होने से मित्ररूप है एवं दुराचार प्रवृत्त आत्मा अपकारी होने से शत्रुरूप है। इस प्रकार आत्मा ही सुख दुःख का देनेवाला है और वही मित्र और शत्रु रूप है।

—उत्तराध्ययन महानिर्ग्रन्थीय अध्ययन

Ye are the temple of God. Ye are the Salt of the earth. If the salt lose its Savor, with what shall it be flavoured? What shall it profit a man if he gain the whole world but lose his own soul?

भावार्थ—तुम स्वयं देवालय हो तुम ही भूमंडल के सारभाग हो। यदि नमक अपना स्वाद खो दे तो फिर उसमें क्या विशेषता रहेगी। इसी प्रकार यदि मानव अपनी आत्मा को खो दे तो फिर अखिल विश्व के पा लेने पर भी उसे क्या लाभ होगा।

—बाइबिल

What the undeveloped man seeks is others what the advanced man seeks is himself.

भावार्थ—अविकसित मानव की खोज के विषय आत्मा से भिन्न पदार्थ हैं जबकि उन्नत मानव अपनी आत्मा की ही खोज करता है।

—कन्फ्यूशस

The human mind partaking of Divinity, is an abode of the Deity, which is the Spiritual Essence There exists no highest Deity outside the human mind.

भावार्थ—देवत्व को ग्रहण करनेवाला मानव का मस्तिष्क ही देव-मन्दिर है। यही आध्यात्मिक मूल तत्त्व है। मनुष्य के मस्तिष्क के बाहर किसी भी महान् देवता का अस्तित्व नही है।

(Shinto Din Ju)

सनातनं गुह्यमिद ब्रवीमि, न मनुष्यात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्।

भावार्थ—मानव से अधिक महान् कोई भी नही है, यह सनातन रहस्य तुम्हें बतलाता हूँ।

—महाभारत

The heavens are still, no sound
Where there shall God be found?
Search not in distant skies,
In man's own heart he lies

भावार्थ—स्वर्ग शान्त हैं, वहाँ से कोई आवाज नही आती। फिर ईश्वर की खोज कहाँ की जाय ? सुदूर आकाश में उसे न ढूंढ़ो। वह मनुष्य के हृदय में ही विराजमान है।

Shao Yung

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मा ह्येवात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मन॥

भावार्थ—आत्मा का उद्धार आत्मा से ही करो, किन्तु उसका पतन न होने दो। आत्मा ही आत्मा का मित्र है और आत्मा ही आत्मा का शत्रु है।

—गीता

Thy money perish with thee, because thou hast thought that the gift of God may be purchased with money

भावार्थ—तेरा धन तेरे साथ नष्ट हो जाय क्योंकि तूने धन के बल पर ईश्वर की देन को खरीदने का विचार किया है।

—बाइबिल

वित्तेण ताणं न लभे पमत्ते इमम्मि लोए अदुवा परत्था।

भावार्थ—क्या इस लोक में और क्या परलोक में कहीं भी प्रमत्त व्यक्ति धन द्वारा अपनी रक्षा नहीं कर सकता।

—उत्तराध्ययन असंस्कृताध्ययन

धणेण किं धम्मधुराहियारे सयणेण वा कामगुणेहिं चेव।

भावार्थ—जहाँ धर्माचरण का प्रश्न है वहाँ धन से कोई मतलब नहीं। इसी तरह स्वजन एवं शब्दादि इन्द्रिय विषयों का भी उसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है।

—उत्तराध्ययन इषुकारीयाध्ययन

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः न मेधया न बहुना श्रुतेन।

भावार्थ—प्रवचन बुद्धि एवं अनेक शास्त्रों का ज्ञान—इन सभी से आत्म-लाभ करना सम्भव नहीं है।

—उपनिषद्

न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यो।

भावार्थ—धन से मानव की आत्मा तृप्ति नहीं होती।

—कठोपनिषद्

If thine enemy be hungry give him bread, if be thirsty give him water; so shalt thou heap

coals of fire upon his head, and so the Lord shall award thee.

भावार्थ—यदि तुम्हारा शत्रु भूखा हो तो उसे भोजन दो, यदि वह प्यासा हो तो उसे पानी पिलाओ। ऐसा करने से तुम उसके सिर पर अगारो की राशि रख दोगे अर्थात् पश्चात्ताप की अग्नि से वह जलने लगेगा। परमात्मा से तुम्हें इसके लिये पारितोषिक मिलेगा।

—बाइबिल

जो सहस्स सहस्साण सगामे दुज्जए जिणे।
एगं जिणेज्ज अप्पाणं एससेपरमो जओ॥

भावार्थ—एक शूरवीर योद्धा दुर्जेय सग्राम में दस लाख सैनिको को जीत लेता है और एक महात्मा अपने आत्मा पर विजय प्राप्त कर लेता है। इन दोनो में महात्मा की विजय ही श्रेष्ठ विजय है।

—उत्तराध्ययन, नमिप्रव्रज्याध्ययन

अत्ता हि अत्तनो नाथो को हि नाथो परो सिया।
अत्तना हि सुदतेन नाथ लब्भति दुल्लभ॥

भावार्थ—आत्मा ही आत्मा का सहायक है। इसके सिवा अन्य कौन सहायक हो सकता है। आत्मा का दमन कर मनुष्य दुर्लभ सहायक प्राप्त कर लेता है।

—धम्मपद-आत्मवर्ग

अप्पा चेव दमेयव्वो अप्पा हु खलु दुद्दमो।
अप्पा दनो सुही होइ अस्सि लोए परत्थ य॥

भावार्थ—आत्मा का दमन करना बडा कठिन है इसलिए आत्मा ही का दमन करना चाहिये। जिसने अपनी आत्मा को वश कर लिया है वह इस लोक और परलोक दोनों जगह सुखी होता है।

—उत्तराध्ययन, विनयश्रुताध्ययन

अन्यस्य शोक तापेन तप्यन्ते साधवो जनाः ।
परमाराधनं तद्धि पुरुषस्याखिलात्मनः ॥

भावार्थ—सन्त पुरुष विश्व के दुःख को अपना दुःख समझ कर दुःखी होते हैं और यही विश्वात्मरूप परमात्मा की सबसे बड़ी सेवा है।

(भागवत)

येन केन प्रकारेण यस्य कस्यापि जन्तुनः ।
संतोषं जनयेद्धीमांस्तदेवेश्वर पूजनम् ॥

भावार्थ—बुद्धिमान मनुष्य को चाहिए कि वह हर तरह से विश्व के सभी प्राणियों को शान्ति पहुँचावे । यही ईश्वर की पूजा है ।

(भागवत)

The disease of men is thus that they neglect their own field and go to weed the field of others, and what they require from others is great while what they lay upon themselves is light.

भावार्थ—मनुष्यों में यही बीमारी है कि वे अपने खेत को छोड़ दूसरों के खेत की सफाई करने जाते हैं—वे अपने दोष न देख दूसरों के छिद्र खोजते रहते हैं वे दूसरों से महानता की आशा रखते हैं जब कि वे स्वयं तुच्छता अपनाए रहते हैं ।

—कन्फ्यूशस-मेन्शस

To attempt to correct others while one's own virtue is clouded is to set one's own virtue a task for which it is inadequate.

भावार्थ—यदि किसी व्यक्ति में सद्गुण प्रकट नहीं हुए हैं तो फिर दूसरों का सुधार करने का प्रयत्न करना ऐसे कार्य में हाथ डालना है जिसके लिये वह सर्वथा अयोग्य है ।

(Taoist writings)

न परेसं विलोमानि न परेसं कताकतं।
अत्तनो व अवेक्खेय्य कतानि कतानि च ॥

भावार्थ—दूसरे की त्रुटियो या कृत्य अकृत्यों को न देखो। अपनी ही त्रुटियो तथा अपने ही कृत्य अकृत्यो पर विचार करो।

(धम्मपद-पुप्फवर्ग)

यदन्यैर्विहितं नेच्छेदात्मनः कर्म पूरुषः।
अपत्रपेत वा यस्मान्न तत्कुर्यात् कदाचन ॥

भावार्थ—जो कार्य मनुष्य दूसरो को वताना नही चाहता अथवा जिस कार्य के करने में लज्जा अनुभव करता है वह कार्य उसे कभी न करना चाहिये।

(महाभारत)

यो चात्मानं समुक्कंसे परं च मवजानति।
निहीनो सेन मानेन तं जञ्ञा वसलो इति ॥

भावार्थ—जो अहंभाव के कारण पतित होकर आत्म स्तुति और परनिन्दा करता है उसे चाडाल समझना चाहिए।

—सुत्तनिपात-वसलसुत्त

जे परिभवइ परं जणं संसारे परिवत्तई महं।
अदु इंखणिया उपाविया इति सखाय मुणी न मज्जइ ॥

भावार्थ—जो व्यक्ति दूसरे की अवज्ञा करता है वह चिरकाल तक ससार मे परिभ्रमण करता रहता है। परनिन्दा भी आत्मा को नीचे गिरानेवाली है। यह जानकर मुनि, जाति कुल श्रुत तप आदि किसी का भी मद नही करता।

—सूयगडा वैतालीयाध्ययन

The recompense of good and evil follows as the shadow follows the figure

भावार्थ—जैसे छाया मूर्ति का अनुसरण करती है इसी प्रकार सुकृत्य और दुष्कृत्य के अच्छे बुरे फल भी कार्यों का अनुसरण करते हैं।

Ta Tai Shang Ken Ying Pien

सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा।
स्वयं कृतं स्वेन फलेन युज्यते शरीर हे निस्तर यत्त्वया कृतम्॥

भावार्थ—सुख दुःख का देनेवाला कोई नहीं है। दूसरा देता है यह सोचना अज्ञानता है। हमारे अच्छे बुरे कार्य ही अच्छा बुरा फल देते हैं। हे शरीर, तूने जो किया है उसका फल भोग कर तू कृतार्थ हो।

(गरुड़पुराण)

मा असाबेका मिन हसनतिन फ़मिन इलाही
व मा असाबेका मिन सय्यातिन फ़मिन नफ़्सेका।

भावार्थ—तुम में जो अच्छापन है वह सभी परमात्मा से प्राप्त हुआ है और तुम में जो बुराइयाँ हैं वे सभी तुम्हीं से उत्पन्न हुई हैं।

(कुरान)

जज़ा अन बेमा कानु यमलून।

भावार्थ—तुम जो भी करते हो उसके बदले में तुम्हें वैसा ही प्रतिदान और पुरस्कार प्राप्त होगा।

(कुरान)

Those who do evil in the open light of day—men will punish them. Those who do evil in secret—God will punish them. Who fears both man and God—he is fit to walk alone.

भावार्थ—जो दिन दहाड़े बुरे कार्य करते हैं उन्हें मनुष्य दंड देते हैं। जो छिपकर बुरे काम करते हैं उन्हें ईश्वर दंड देता है। जो मनुष्य

और ईश्वर—दोनो से भय रखता है वह एकाकी विचरण करने योग्य है ।

(T Kwang-Tze)

इवफा विलाते हेया अहसन ।

भावार्थ—बुराइयो को दवा लो और उनके वदले खूवियाँ पैदा करो ।

(कुरान)

पमाय कम्म माहसु अप्पमाय तहावर।

भावार्थ—तीर्थंकरदेव ने प्रमाद ही को कर्म कहा है और अप्रमाद को कर्म का अभाव वतलाया है ।

(सूयगडाग वीर्याध्ययन)

अप्पमादो अमतपवं पमादो मच्चुनो पद ।
अप्पमत्ता न मीयन्ति ये पमत्ता यथा मता ॥

भावार्थ—अप्रमाद से अमृतपद की प्राप्ति होती है और प्रमाद से मृत्यु की । जो प्रमाद रहित है वे नही मरते और प्रमादी मरे के ही समान है ।

(धम्मपद-अप्रमाद वर्ग)

Not learning but doing is the cheif thing
भावार्थ—ज्ञान नही किन्तु क्रिया ही प्रधान वस्तु है ।

(Judaism)

यथापि रुचिर पुष्फ वण्णवन्त अगन्धकं ।
एव सुभासिता वाचा अफला होति अकुव्वतो ॥

भावार्थ—जैसे फूल सुन्दर और रगदार हो किन्तु सुगन्ध वाला न हो तो वह व्यर्थ है । इसी प्रकार सुन्दर शब्द यदि कार्यरूप में परिणत न किये जायें तो व्यर्थ होते हैं ।

—धम्मपद-पुष्पवर्ग

Choose ye the path of Action Dutiful .For the deluded one who giveth up All action—he forfeiteth welfare too.

भावार्थ—कर्तव्यमय कर्ममार्ग को स्वीकार करो। जो भ्रान्त व्यक्ति सभी कर्म छोड़ बैठता है वह सुख से भी वंचित हो जाता है।

(Zend-Avesta)

जहा खरो चंदणभारवाही भारस्सभागी न हु चंदणस्स।
एवं खु नाणी चरणेण हीणो भारस्सभागी न हु सुग्गईए॥

भावार्थ—जैसे चन्दन का भार ढोनेवाला गधा केवल भार ही का भागी है चन्दन की शीतलता उसे नहीं मिलती। इसी प्रकार चारित्र रहित ज्ञानी का ज्ञान केवल भार रूप है। वह सुगति का अधिकारी नहीं होता।

—विशेषावश्यक भाष्य

एवं खु नाणिणो सारं जं न हिंसइ कंचण।

भावार्थ—ज्ञानी के ज्ञान सीखने का यही सार है कि वह किसी प्राणी की हिंसा न करे। इसी प्रकार असत्य आदि पाप का सेवन भी न करे।

—सूत्रकृतांग समयाध्ययन

जो च वस्ससतं जीवे कुसीतो हीनवीरियो।
एकाहं जीवितं सेय्यो विरियमारभतो दळ्हं॥

भावार्थ—सौ वर्ष के आलसी और हीनवीर्य जीवन की अपेक्षा एक दिन का दृढ़ कर्मण्यता का जीवन अच्छा है।

—धम्मपद-सहस्सवग्ग

सव्वओ पमत्तस्स भयं सव्वओ अप्पमत्तस्स नत्थि भयं।

भावार्थ—प्रमादी को चारों ओर से भय ही भय है। सावधान व्यक्ति को कहीं से भी भय नहीं है।

(आचारांग शीतोष्णीयाध्ययन)

पण्डुपलासो व दानिसि यमपुरिसा पि च त उपट्ठिता ।
उय्यागमुखे च तिट्ठसि पायेय्य पि च तेन विज्जति ।।

भावार्थ—तू पीले पत्ते के समान है । यम के दूत तेरी ताक में हैं । तू वियोग के द्वार पर खडा है । (मरने के निकट है) और मार्ग के लिये तेरे पास पाथेय नही है ।

(धम्मपद-मलवर्ग)

दुमपत्तए पडुरए जहा निवडइ एइगणाण अच्चए ।
एव मणुयाण जीविय, समय गोयम मा पमायए ।।

भावार्थ—जैसे वृक्ष का पका हुआ पीला पत्ता कुछ दिन बीतने पर गिर पडता है । इसी प्रकार मनुष्य का जीवन है । इसलिये हे गौतम ! तू समय मात्र भी प्रमाद न करना ।

(उत्तराध्ययन, द्रुमपत्रकाध्ययन)

जस्सत्थि मच्चुणा सक्ख जस्स वऽत्थि पलायण ।
जो जाणे न मरिस्सामि सो हु कखे सुए सिया ।।

भावार्थ—जिसकी मृत्यु के साथ मैत्री है, जो मृत्यु से बचकर भग सकता है अथवा जो यह निश्चयपूर्वक जानता है कि मैं नही मरूँगा, ऐसा व्यक्ति ही किसी कार्य के लिये कल पर निर्भर रह सकता है ।

—उत्तराध्ययन, इषुकारीयाध्ययन

अस्सय्यो मिन्नि व इतमामे मिन्नु ला ।

भावार्थ—प्रयत्न करना मनुष्य का काम है, सफलता ईश्वर के हाथ है ।

(हदीस)

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।

भावार्थ—पुरुषार्थ करना तेरे वश की बात है पर फल पर तेरा कोई अधिकार नही है ।

(गीता)

सव्वं सुचिण्णं सफलं नराणं कडाण कम्माण न मुक्खअत्थि ॥

भावार्थ—प्राणियों के सभी सदनुष्ठान सफल होते हैं। जो कर्म किये हैं उनका फल भोगना ही पड़ता है उनसे छुटकारा सम्भव नहीं है।

(उत्तराध्ययन चित्तसंभूतीयाध्ययन)

जयं चरे जयं चिट्ठे जयमासे जयं सए।
जयं भुंजंतो भासंतो पावं कम्मं न बंधइ ॥

भावार्थ—जो यतना के साथ चलता है, खड़ा होता है बैठता है और सोता है तथा जो यतना के साथ भोजन करता है एवं बातचीत करता है उसे पाप कर्म का बन्ध नहीं होता।

(दशवैकालिक षड्जीवनिकाध्ययन)

विकारहेतौ सति विक्रियन्ते येषां न चेतांसि त एव धीरा ॥

भावार्थ—विकारोत्पादक पदार्थों के बीच में रहते हुए भी जिनका चित्त विकृत नहीं होता वे ही धीर पुरुष हैं।

(कालिदास)

Blessed is the man that endureth temptation

भावार्थ—पवित्र मनुष्य वही है जो प्रलोभन के वश नहीं होता।

(बाइबिल)

जे य कंते पिये भोए लद्धे विपिट्ठी कुव्वई।
साहीणे चयइ भोए से हु चाइत्ति वुच्चइ ॥

भावार्थ—जो पुरुष प्राप्त मनोज्ञ एवं प्रिय भोगों को ठुकरा देता है। स्वाधीन भोग सामग्री का त्याग कर देता है वही त्यागी कहा जाता है।

(दशवैकालिक श्रामण्यपूर्वकाध्ययन)

वत्थ गंध मलंकारमित्थिओ सयणाणि य।
अच्छंदा जे न भुंजंति न से चाइत्ति वुच्चइ ॥

भावार्थ—जो अभाव या पराधीनता के कारण विवश हो वस्त्र, गन्ध, आभूषण, स्त्री, शय्या आदि भोग सामग्री का उपयोग नही करता वह त्यागी नही है

(दशवैकालिक, श्रामण्यपूर्वकाध्ययन)

नत्थि रागसमो अग्गी, नत्थि दोस समो गहो।
नत्थि मोह सम जाल, नत्थि तण्हा समा नदी॥

भावार्थ—राग के समान कोई आग नही, द्वेप के समान कोई अरिष्ट ग्रह नही, मोह के समान कोई जाल नही और तृष्णा के समान कोई नदी नही॥

—धम्मपद-मलवर्ग

रागो य दोसो वि य कम्मबीय कम्म च मोहप्पभव वदन्ति।
कम्म च जाइमरणस्स मूल, दुक्ख च जाइमरण वयन्ति॥

भावार्थ—राग और द्वेष कर्म के मूल कारण है। कर्म मोह से उत्पन्न होता है। जन्म मृत्यु का मूल हेतु कर्म है और जन्म और मृत्यु को ही दुख कहा जाता है।

(उत्तराध्ययन, प्रमादस्थानाध्ययन)

दुक्ख हयं जस्स न होइ मोहो मोहो हओ जस्स न होइ तण्हा।
तण्हा हया जस्स न होई लोहो लोहो हओ जस्स न किंचणाई॥

भावार्थ—जिसके मोह नही है उसका दुख नष्ट हो गया। जिसके तृष्णा नही है उससे मोह दूर हो गया। जिसके लोभ नही है उसके तृष्णा भी नही है और जिसके पास कुछ नही है उसे लोभ भी नही है।

जहा लाहो तहा लोहो लाहा लोहो पवड्ढई।

भावार्थ—ज्यो ज्यो वस्तु का लाभ होता है त्यो त्यो लोभ बढ़ता है। लाभ ही लोभ-वृद्धि का कारण है।

(उत्तराध्ययन, कापिलिकाध्ययन)

मुच्छा परिग्गहो वुत्तो इइ वुत्तं महेसिणा ।

भावार्थ—तीर्थंकर भगवान् ने मूर्छा-ममत्व भाव को ही परिग्रह कहा है।

(दशवैकालिक महाचारकथाध्ययन)

खुहं पिवासं दुस्सिज्जं सीउण्हं अरइं भयं ।
अहियासे अव्वहिओ देहदुक्खं महाफलं ॥

भावार्थ—भूख प्यास दुःशय्या शीत उष्ण अरति और भय—इन्हें अव्यथित भाव से सहन करना चाहिये। समभाव से सहन किया गया शारीरिक दुःख (कायाक्लेश) महान् फल देनेवाला है।

(दशवैकालिक आचारप्रणिध्यध्ययन)

Whatever afflictions they mayst put on me
As blissful favours will I take them all.

भावार्थ—वे मुझे कैसे ही कष्ट क्यों न दें मैं उन सभी को आनन्दप्रद अनुग्रह के रूप में ग्रहण करूँगा।

(Zend-Avesta)

अल फक्रो फख्री।

भावार्थ—अकिंचन दीनावस्था में मुझे गर्व होता है।

—हदीस

यस्यानुग्रहमिच्छामि तस्य सर्वं हराम्यहम् ॥

भावार्थ—जिस व्यक्ति पर मेरी कृपा होती है मैं उसका सर्वस्व छीन लेता हूँ।

(भागवत)

इजा अहब्बा इलाहे अब्दा अब्तला अहुबिल बलाये।

भावार्थ—जब भगवान् अपने भक्त को प्यार करते हैं तो उसकी जाँच के लिये मुसीबतें भेजते हैं।

(हदीस)

Heaven makes hard demands on faith.

भावार्थ—श्रद्धा के लिये परमात्मा की ओर से निष्ठुर मांग होती है।

(कन्फ्यूशस शिकिंग)

क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति।

भावार्थ—भूख प्यास लगने पर बच्चे माता को याद करते हैं।

(शंकराचार्य)

ला यु अल्ले मोमिनो निया लहु मिनल अजरे।

फइल मसायावा ला तमन्नाओ अन्नहुल कुरजे बिल मक़रीज।

भावार्थ—जिस व्यक्ति में परमात्मा के प्रति श्रद्धा भक्ति है वह यदि यह समझ ले कि उन यातनाओं को, जिन्हें वह दुर्भाग्य समझता है, सहन करने से भगवान् की ओर से क्या क्या वरदान प्राप्त होते हैं तो वह उनके लिये लालायित होगा और चाहेगा कि क़ैंची से उसके शरीर के टुकड़े टुकड़े कर दिये जायें।

(कुरान)

विपदः सन्तु नः शाश्वत्तत्र तत्र जगद्गुरो।
भवतो दर्शनं यत्स्यादपुनर्भवदर्शनम्॥

भावार्थ—हे जगद्गुरो! हमारी आपसे विनय है कि हम पर सदा सर्वदा विपत्तियां आती रहें ताकि हमें आपका दर्शन सुलभ हो जिसे पाकर जीव इस संसार में पुनः जन्म नहीं लेते।

(भागवत)

The sacrifices of God are a broken spirit, a broken and a contrite heart Thou wilt not despise.

भावार्थ—भग्न हृदय आत्मा ईश्वर का नैवेद्य है। भग्न एवं अनुतप्त हृदय से तुझे घृणा न करनी चाहिये।

(बाइबिल)

Tis only through a broken heart
That Christ can enter in.

भावार्थ—केवल भग्नहृदय मानव के अन्तर में ही ईसामसीह का पदार्पण होता है।

(एक मसीही कवि)

सच्चं वे अमता वाचा एस धम्मो सनन्तनो।
सच्चे अत्थे च धम्मे च आहु सन्तो पतिट्ठिता॥

भावार्थ—सत्यवाणी ही अमृतवाणी है सत्यवाणी ही सनातनधर्म है। सत्य सदर्थ और सद्धर्म पर सन्तजन सदैव दृढ़ रहते हैं।

सुत्तनिपात-सुभासितसुत्त

पुरिसा सच्चमेव समभिजाणाहि सच्चस्स आणाए उवट्ठिए से मेहावी मारं तरइ।

भावार्थ—हे पुरुषो! सत्य ही का सेवन करो सत्य की आज्ञा का आराधक मेधावी पुरुष मृत्यु को तिर जाता है।

(आचारांग शीतोष्णीयाध्ययन)

सत्यान्नास्ति परो धर्मः।

भावार्थ—सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है।

(महाभारत)

Ye Shall know the truth and truth shall make you free.

भावार्थ—तुम सत्य को समझो। सत्य तुम्हें मुक्त कर देगा।

(बाइबिल जोन)

मज सूफी ला मजहबो लहू इल्ला मजहबुलहक़।

भावार्थ—सूफी सत्य के सिवा कोई धर्म नहीं मानते।

(सूफी)

सच्चानुपत्तिया खो, भारद्वाज, पधान वहुकर, नो चे त पदहेय्य, न य इद सच्च अनुपापुणेय्य ।

भावार्थ—सत्य प्राप्ति का उपकारी धर्म प्रयत्न (प्रधान) है मनुष्य प्रयत्न न करे तो फिर सत्य की प्राप्ति कहाँ से हो ।

—मज्झिम-निकाय

सत्य ब्रूयात्प्रिय ब्रूयात् न ब्रूयात्सत्यमप्रियं ।
प्रियं च नानृतं ब्रूयात् एष धर्म॰ सनातन॰ ॥

भावार्थ—ऐसा सत्य कहो जो प्रिय हो । अप्रिय सत्य न कहो और न प्रिय असत्य ही कहो । यही सनातन धर्म है ।

(महाभारत)

मुसावाओ उ लोगम्मि सव्व साहूहि गरहिओ ।
अविस्सासो य भूयाण तम्हा मोस विवज्जए ॥

भावार्थ—ससार में सभी साधु पुरुषो ने मृषा वाणी की निन्दा की है । मृषा (असत्य) बोलनेवाला दूसरे जीवो का विश्वास खो देता है । इसलिए मृषावाणी से परहेज़ करना चाहिये ।

(दशवैकालिक, महाचारकथाध्ययन)

मुहुत्त दुक्खाउहवंति कटया, अओमया ते वि तओ सुउद्धरा ।
वायावुरुत्ताणि दुरुत्तराणि वेराणुबधोणि महब्भयाणि ॥

भावार्थ—लोहे के तीखे काँटे थोडे समय तक ही दु॰ख देते हैं और वे सहज ही शरीर में से निकाल लिये जाते हैं । किन्तु हृदय में चुभे हुए कठोर वचनो का निकालना सहज नही है । इनसे वैर बँध जाता है और ये बडे भयावह सिद्ध होते हैं ।

(दशवैकालिक, विनयसमाध्यध्ययने)

Not that which goeth in at the mouth defileth a man, but which cometh out of the mouth, this defileth hand.

भावार्थ—यह बात नहीं है कि जो (अशुद्धिकर खान-पान) मुँह में जाता है वही मनुष्य का बिगाड़ करता है किन्तु जो (दुर्वचन) मुँह से बाहर निकलता है वह भी मनुष्य का बिगाड़ करता है।

(बाइबिल)

इस ज़बान को जिस इसलेहि न करना मूज्ञ मनेका हाया, या हमा या कि कुनुमारो किभारे भला कुबूहेपि इना हुसदी मनलिनावेहि।

भावार्थ—पैगम्बर साहेब ने जिह्वा की ओर संकेत करते हुए कहा—आप लोग अपनी इस इन्द्रिय का संयम रखिये। इसके कारण लोग पाप का इतना भारी गट्ठर बाँध लेते हैं कि वे सिर के बल नरक की आग में ढकेल दिये जाते हैं।

(मुहम्मद साहेब)

तावज्जितेन्द्रियो न स्यात् विजितान्येन्द्रियो पुमान्।
न जयेद्रसनं यावज्जितं सर्वं जिते रसे॥

भावार्थ—दूसरी इन्द्रियों को जीत लेने पर भी पुरुष तब तक जितेन्द्रिय नहीं कहलाता जब तक कि उसने रसना (जिह्वा) को नहीं जीता है। रसे जिसने जीत लिया है उसने सभी को जीत लिया।

(भागवत)

आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः, सत्त्वशुद्धौ ध्रुव स्मृतिः।
स्मृति लंभे सर्व ग्रन्थीनां विप्रमोक्षः॥

भावार्थ—पवित्र भोजन से मन पवित्र रहता है। मानसिक पवित्रता से स्मरणशक्ति अबाधित एवं स्पष्ट हो जाती है। इस स्मरणशक्ति को पाकर आत्मा सभी बन्धनों से छूट जाता है।

—छान्दोग्योपनिषद्

त्यागेनैकेनामृतत्वमश्नुते ।

भावार्थ—सासारिक सुखो का त्याग करने से आत्मा अमरता प्राप्त करता है ।

उपनिषद्

भिक्षुओ ! मैं तुम्हारी सेवा न करूँ तो कौन करेगा ? तुम्हारे यहाँ माता नही, पिता नही, जो तुम्हारी सेवा-शुश्रूपा करते । तुम एक दूसरे की सेवा न करोगे तो फिर कौन करेगा । जो रोगी की सेवा करता है वह मेरी ही सेवा करता है ।

—बुद्धचर्या

सय्यद उल क़ौमे ख़ादिमे हुम ।

भावार्थ—नेता अपने दल का मुख्य सेवक होता है ।

(हदीस)

He that is greatest among you shall be your servant

भावार्थ—जो तुम लोगो में सबसे बडा है वह तुम्हारा सेवक होगा ।

—बाइबिल

वेयावच्चेण भते जीवे किं जणयइ ? वेयावच्चेण तित्थयर गोत्तं नाम कम्म वधइ ।

भावार्थ—प्र०—हे भवगन् ! वैयावृत्त (सेवा) करने से जीव को क्या लाभ होता है ?

उ०—वैयावृत्य से जीव तीर्थंकर गोत्र कर्म का वध करता है ।

—उत्तराध्ययन सम्यक्त्वपराक्रमाध्ययन

Humility is the root of honour, lowliness the foundation of loftiness, the world's weakest overcomes the world's hardest

भावार्थ—नम्रता प्रतिष्ठा का मूल कारण है, लघुता महानता की नींव है। संसार का सबसे बड़ा मृदुल व्यक्ति संसार के कठोरतम व्यक्ति को पराजित कर देता है।

T Tao Teh King

God giveth to grace to the humble.

भावार्थ—परमात्मा विनम्र व्यक्ति को अपनी कृपा प्रदान करता है।

—बाइबिल

इन्नल्लाहो ला यु हिब्बो कुल्ले मुख्तालिन् फ़खूरिन्।

भावार्थ—आत्म श्लाघा करने वाले अभिमानी लोग परमात्मा का प्रेम नहीं पाते।

—कुरान

Pride bringeth loss humility increase. This is the way of Heaven. He comes to ruin who says that others do not equal him

भावार्थ—अभिमान से हानि होती है, इसलिये विनम्रता की वृद्धि करो। यही स्वर्ग का मार्ग है। जो यह कहता है कि दूसरे लोग मेरी समता नहीं करते उसका सर्वनाश हो जाता है।

(कन्फ्यूशस-सूक्ति)

Those, who aspire to greatness, must humble themselves.

भावार्थ—महत्वाकांक्षी व्यक्ति के लिये विनम्र होना आवश्यक है।

(Tao Teh King)

The meek shall inherit the earth, and their's is the Kingdom of heaven.

भावार्थ—जो लोग नम्र हैं उन्हें पृथ्वी का उत्तराधिकार प्राप्त होगा और स्वर्ग का साम्राज्य भी उन्ही का है।

(बाइबिल)

इन्ना अक्रमुकुम इन्दा इलाहे अत् काकुम।

भावार्थ—जो व्यक्ति तुम लोगो मे सबसे अधिक शरीफ़ हैं वही परमात्मा के अधिक समीप एव उसकी दृष्टि में महान् है।

(कुरान)

एव धम्मस्स विणओ मूल परमो से मुक्खो।
जेण कित्ति सुअं सिग्घ, नीसेस चाभिगच्छइ॥

भावार्थ—विनय धर्म रूप वृक्ष का मूल है और मोक्ष उसका सर्वोत्तम रस है। विनय से कीर्त्ति-लाभ होता है और पूर्णत प्रशस्त श्रुतज्ञान की प्राप्ति होती है।

दशवैकालिक, विनयएताध्यध्ययन

सपातोऽवियण केइ पुरिसे अम्मापियर सयपाग सहस्सपागेहि तिल्लेहि अब्भगेत्ता सुरभिणा गधट्टएण उव्वट्टित्ता तिहि उदगेहि मज्जावित्ता सव्वालकारविभूसिय करेत्ता मणुन्न थालीपागसुद्ध अट्ठारस वजणाउल भोयण भोयावेत्ता जावज्जीव पिट्ठिवडेंसियाए परिवहेज्जा। तेणावि तस्स अम्मापिउस्स वुप्पडियार भवइ।

भावार्थ—कोई कुलीन पुरुष सवेरे ही सवेरे शतपाक, सहस्रपाक जैसे तैल से माता पिता के शरीर की मालिश करे, मालिश करके सुगन्धित द्रव्य का उवटन करे। एव इसके बाद सुगन्धित, उष्ण और शीतल—तीन प्रकार के जल से स्नान करावे। तत्पश्चात् सभी अलकारो से उनके शरीर को भूषित करे। वस्त्र, आभूषणो से अलकृत कर मनोज्ञ अठारह प्रकार के व्यजनो सहित भोजन करावे और इसके बाद उन्हें अपने कन्धो पर

उठाकर फिरे। यावज्जीवन ऐसा करने पर भी वह पुरुष माता-पिता के महान् उपकार से उऋण नहीं हो सकता।

—अनाम २

यं मातापितरौ क्लेशं सहेते संभवे नृणाम्।
न तस्याप्रतिकृति शक्या कर्तुं वर्ष शतैरपि॥

भावार्थ—अपनी सन्तान के जन्म एवं पालन-पोषण में माता पिता जो कष्ट उठाते हैं सैकड़ों वर्ष पर्यन्त उनकी सेवा करके भी उसका ऋण नहीं चुकाया जा सकता।

(महाभारत)

Filial devotion and respect for elders are the very foundation of an unselfish life.

भावार्थ—माता पिता की भक्ति एवं गुरुजनों का सम्मान निःस्वार्थ जीवन के निर्माण में नींव रूप है।

(कन्फ्यूशस)

Honour thy father and thy mother.

भावार्थ—अपने माता पिता का सम्मान करो।

(बाइबिल)

माता पितु उपट्ठानं पुत्तदारस्स संगहो।
अनाकुलानि कम्मानि एतं मंगल मुत्तमं॥

भावार्थ—माता पिता की सेवा स्त्री पुत्रादि की संभाल और व्यवस्थित रीति से किये हुए कर्म यही उत्तम मंगल है।

(सुत्तनिपात-महामंगलसुत्त)

बिल वालिदैनि एहसाना।

भावार्थ—अपने माता पिता का उपकार मानो।

(कुरान)

अम्ल जन्नतो तहृता कुदुमुल उम ।

भावार्थ—निश्चय ही माता के चरणो में स्वर्ग बिछा हुआ है ।

(हदीस)

वेदस्त्यागश्च यज्ञश्च नियमश्च तपांसि च ।
न विप्रवुष्टस्य भावस्य सिद्धि गच्छन्ति कर्हिचित् ।
ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थं तपस्तीर्थमुदाहृतम् ।
तीर्थानामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनस परा ॥

भावार्थ—जिसका हृदय दुष्ट है उसके लिये वेदो का अध्ययन, त्याग, यज्ञ, नियम, तप—ये सभी बेकार है।

ज्ञान तीर्थ है, धृति तीर्थ है और तप तीर्थ है किन्तु मन की शद्धि सभी तीर्थों से बडा तीर्थ है।

—महाभारत

The pure in heart shall see God

भावार्थ—पवित्र हृदय वाले को ईश्वर के दर्शन होगे ।

(बाइबिल)

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं क्लिष्टेषु जीवेषु कृपा परत्वम् ।
माध्यस्थभाव विपरीत वृत्तौ सदा ममात्मा विदधातु देव ॥

भावार्थ—विश्व के सभी जीवो के साथ मेरा भी मैत्री का व्यवहार हो, गुणी जनो के दर्शन कर मेरा हृदय आनन्द से खिल उठे, और दीन दु खी जीवो को देखकर मेरा चित्त दयाभाव से द्रवित हो जाय एव दुष्ट लोगो पर भी मेरा समभाव रहे पर उनपर द्वेष न हो । हे भगवन् ! मैं चाहता हूँ कि मेरी इस तरह की परिणति हो जाय ।

(सामायिक पाठ)

श्रद्धामयोऽयं पुरुषः यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥

भावार्थ—यह पुरुष श्रद्धामय है। जिसकी जैसी श्रद्धा होती है वह वैसा ही होता है।

(गीता)

इध भिक्खवे भिक्खु मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति करुणा मुदिता उपेक्खा सहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति तथा दुतियं तथा ततियं तथा चतुत्थिं इति उद्धं अधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं, उपेक्खा सहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन फरित्वा विहरति। एवं खो भिक्खवे भिक्खु ब्रह्मप्पत्तो होति।

भावार्थ—मैत्रीपूर्ण चित्त से करुणापूर्ण चित्त से मुदितापूर्ण चित्त से और उपेक्षापूर्ण चित्त से जो भिक्षु चारों दिशाओं को व्याप्त कर लेता है सर्वत्र सर्वात्मकरूप होकर समस्त जगत् को अवैर और महद्गत चित्त से भर देता है उसे मैं 'ब्रह्मप्राप्त' भिक्षु कहता हूँ।

अंगुत्तर निकाय चतुक्कनिपात (ब्रह्मविहारो)

न जच्चा वसलो होति न जच्चा होति ब्राह्मणो।
कम्मना वसलो होति कम्मना होति ब्राह्मणो॥

भावार्थ—जन्म से न कोई शूद्र होता है और न ब्राह्मण ही। कर्म से ही शूद्र होता है और कर्म से ही ब्राह्मण होता है।

—सुत्तनिपात-वसलसुत्त

कम्मुना ब्राह्मणो होति कम्मुना होति खत्तियो।
कम्मुना वेस्सो होति सुद्दो हवइ कम्मुणा॥

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र—ये सभी कर्म से ही
म व ।

(उत्तराध्ययन महावीरवचन)

सात्त्विको ब्राह्मण प्रोक्त क्षत्रियस्तु रजेगुण ।
तमोगुणस्तया वैश्य गुण साम्यात्तु शूद्रता ॥

भावार्थ—सत्त्व गुण वाला ब्राह्मण कहा गया है। रजोगुण और तमोगुण वाले क्रमश क्षत्रिय और वैश्य कहे गये हैं। तीनो गुणो की समता वाला शूद्र होता है।

(भविष्यपुराण)

न खो उच्च कुलीनताय लोभधम्मा वा परिक्खय गच्छन्ति, दोस धम्मा वा परिक्खयं गच्छन्ति, मोहधम्मा वा परिक्खय गच्छन्ति। नो चे पि उच्चा कुला पव्वजितो होति, सो च होति धम्मानुधम्मपतिपन्नो सामिचि पतिपन्नो अनुधम्मचारी, सो तत्य पुज्जो सो तत्य पासंसोति।

भावार्थ—उच्चकुल में जन्म लेने से लोभ थोडा ही नष्ट हो जाता है। उच्चकुल में जन्म लेने से न द्वेष ही नष्ट होता है न मोह ही। उच्च-कुल मे भले ही जन्म न लिया हो, किन्तु यदि मनुष्य धर्म मार्ग पर आरूढ होकर धर्म का ठीक ठीक आचरण करता है तो वह पूज्य है। प्रशसनीय है।

(मज्झिमनिकाय-सप्पुरिससुत्त)

सक्ख खु दीसइ तवो विसेसो न दीसइ जाइ विसेस को वि।

भावार्थ—साक्षात् तप की विशेषता दिखाई देती है, जाति की कोई विशेषता दिखाई नही देती।

(उत्तराध्ययन १२ अध्य०)

पठम नाणं तओ दया एव चिट्ठई सव्व सजए।
अन्नाणी कि काही कि वा नाहीइ सेय पावग॥

भावार्थ—पहले ज्ञान और उसके बाद क्रिया है। इस प्रकार ज्ञान और क्रिया दोनो—स्वीकार करने से ही साधु अपने आचार का पालन कर सकता है। साध्य और उसकी प्राप्ति के उपाय का जिसे ज्ञान नही

है वह क्या कर सकता है और अपने कल्याण और अकल्याण को भी कैसे समझ सकता है।

(दशवैकालिक षड्जीवनिकाध्ययन)

जिस वस्तु का जन्म हुआ है उसका नाश न हो क्या यह सम्भव है।

(धीर्घनिकाय)

सव्वं जगं जइ तुहं सव्वं वा वि धणं भवे।
सव्वं पि ते अपज्जत्तं नेव ताणाय तं तव॥

भावार्थ—यदि यह सारा संसार और सभी धन तुम्हारा हो जाय फिर भी यह तुम्हारे लिये पर्याप्त न होगा और न इससे तुम्हारी रक्षा ही हो सकेगी।

—उत्तराध्ययन इषुकारीयाध्ययन

सुवण्ण रुप्पस्स उ पव्वया भवे सिया हु केलास समा असंखया।
नरस्स लुद्धस्स न तेहिं किंचि इच्छा हु आगास समा अणंतिया॥

भावार्थ— कैलाश पर्वत के समान सोने चाँदी के असंख्यात पर्वत भी हो तो उनसे भी लोभी मनुष्य का मन नहीं भरता। सच है, आकाश की तरह इच्छाओं का कहीं अन्त नहीं आता।

—उत्तराध्ययन नमिप्रव्रज्याध्ययन

सोने चाँदी के लाखों करोड़ों सिक्कों को मैं अच्छा धन नहीं कहता। उनमें तो भय ही भय है—राजा का अग्नि का जल का चोर का लुटेरे का और अपने सब सम्बन्धियों तक का भय है।

(बुद्धवाणी)

सद्धा धनं सील धनं हिरि ओत्तप्पियं धनं।
सुतधनं च चागो च पञ्ञा वे सत्तमं धनं।

यस्स एते धना अत्थि इत्थिया पुरिसस्स वा।
अदालिद्दो ति त आहु अमोघं तस्स जीवितम् ।।

भावार्थ—श्रेष्ठ और अचचल तो मैं इन सात धनो को मानता हूँ— श्रद्धाधन, शीलधन, लज्जाधन, लोकभयधन, श्रुतधन, त्यागधन और प्रज्ञाधन। जिस स्त्री पुरुष के ये धन हैं उसे दारिद्रय का अभाव कहा गया है और उसीका जीवन सफल है।

(अगुत्तरनिकाय-धनवग्ग)

चत्तारि परमगाणि वुल्लहाणीह जंतुणो।
माणुसत्तं सुई-सद्धा सजममि य वीरियं ।।

भावार्थ—इस ससार में प्राणियो के ये चारो अग परम दुर्लभ हैं— मनुष्यभव, शास्त्रश्रवण, श्रद्धा और सयम में पराक्रम।

(उत्तराध्ययन चतुरगीयाध्ययन)

किच्छो मनुस्स पटिलाभो किच्छं मिच्चा न जीवितं।
किच्छ सद्धम्म सवण किच्छो बुद्धानमुप्पादो ।।

भावार्थ—मनुष्य जन्म कठिन है, मृत्यु वाला जीवन कठिन है। सच्चे धर्म का सुनना कठिन है और बुद्धो का उठना कठिन है।

—धम्मपद-बुद्धवगं

लब्भन्ति विमला भोया लब्भन्ति सुरसपया।
लब्भन्ति पुत्तमित्तं च एगो धम्मो न लब्भई ।।

भावार्थ—सुन्दर मनोज्ञ भोग, देव सम्पत्ति, पुत्र और मित्र—इन सभी का पाना सहज है। केवल एक धर्म की प्राप्ति दुर्लभ है।

जा जा वच्चई रयणी न सा पडिनियत्तई।
धम्म च कुणमाणस्स सफला जति राईओ ।।

भावार्थ—जो रातें बीत रही हैं वे वापिस नहीं लौटतीं। जो व्यक्ति धर्म क्रिया का आचरण करता है उसकी रात्रियां सफल होती हैं।

(उत्तराध्ययन, इषुकारीयाध्ययन)

पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं तहेव सज्झाओ।
झाणं च विउस्सग्गं एसो अब्भिंतरो तवो॥

भावार्थ—प्रायश्चित्त विनय वैयावृत्य स्वाध्याय ध्यान और व्युत्सर्ग—ये आभ्यन्तर तप हैं।

(उत्तराध्ययन तपोमार्गगत्यध्ययन)

अच्चणं रयणं चेव वंदणं पूयणं तहा।
इड्ढी सक्कार सम्माणं मणसा वि न पत्थए॥

भावार्थ—अर्चा पूजा अथवा नमस्कार, ऋद्धि सत्कार और सम्मान—इनकी मुमुक्षु मन से भी इच्छा न करे।

(उत्तराध्ययन अनगारमतिमार्गाध्ययन)

चीराजिणं नगिणिणं जडी संघाडि मुण्डिणं।
एयाणि वि न तायंति दुस्सीलं परियागयं॥

भावार्थ—विविध वस्त्र पहनना नग्न रहना जटा रखना कन्था धारण करना मस्तक का मुंडन करना—इन धर्म-चिह्नों को धारण करके भी जो व्यक्ति दुराचार का सेवन करता है। दुराचारी साधु नामधारी उस व्यक्ति को ये चिह्न दुर्गति से रक्षा नहीं करते।

(उत्तराध्ययन अकाममरणाध्ययन)

किं ते जटाहि दुम्मेध किं ते अजिन साटिया।
अब्भन्तरं ते गहनं बाहिरं परिमज्जसि॥

भावार्थ—हे मूर्ख! जटा से क्या लाभ और मृगचर्म से भी क्या लाभ? तेरा भीतर का तो गन्दा है। बाहर धोने से क्या होता है।

—धम्मपद (ब्राह्मण वर्ग)

जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा।
जे अणासवा ते अपरिस्सवा, जे अपरिस्सवा ते अणासवा ॥

भावार्थ—जिन अनुष्ठानो से आत्मा में कर्म आते हैं उन्ही से कर्मों निरोध होता है और जिनसे कर्मों का निरोध होता है उन्ही से कर्म आते। जिन अनुष्ठानों से आत्मा में कर्मों का आगमन नही होता है उन्ही आत्मा में कर्म आते हैं और जिनसे कर्म का निरोध नही होता है उन्ही कर्मों का निरोध होता है। सभी अध्यवसायो पर निर्भर हैं।

—आचाराग, सम्यक्त्वाध्ययन

जयं वेर पसवति दुक्ख सेति पराजितो।
उपसन्तो सुख सेति हित्वा जय पराजयं ॥

भावार्थ—जय से वैर पैदा होता है क्योकि पराजित पुरुष दु खी होता है। जो जय और पराजय को छोड देता है वही सुख की नीद सोता है।

—धम्मपद, सुखवर्ग

विसेनिकत्वा पन ये चरन्ति विद्धुवीहि दिट्ठि अविरुज्झमाना।
तेसु त्व किं लभेथो पसूर ये सीध नत्थि परम उग्गहित ॥

भावार्थ—जिन्होने प्रतिपक्ष बुद्धि को नष्ट कर दिया है और जो अपने पथ के खातिर दूसरे पथो से विरोध भाव नही रखते, और जिन्हें यह प्रतीत नही होता कि हमारा ही पथ सर्वश्रेष्ठ है, उनके पास जाकर, हे प्रशूर ! तुझे क्या मिलने का है।

—सुत्तनिपात, अट्ठकवर्ग

मेरे परिनिर्वाण के पश्चात् मेरे शरीर की पूजा करने की माथापच्ची में न पडना। मैंने तुम्हें जो सन्मार्ग बताया है उसके अनुसार चलने का प्रयत्न करना।

(दीर्घनिकाय, महापरिनिब्बाणसुत्त)

अप्पमत्ता तुम्हे आनन्द होथ तथागतस्स सरीरपूजाय इंघ तुम्हे आनन्द सदत्थे घटथ सदत्थे अनुयुञ्जथ सदत्थे अप्पमत्ता आतापिनो पहितत्ता विहरथ ।

आनन्द ! तथागत की शरीर पूजा से तुम बेपरवाह होना । तुम आनन्द, सच्चे पदार्थ के लिये प्रयत्न करना सदर्थ के लिये उद्योग करना । सदर्थ में अप्रमादी उद्योगी आत्मसंयमी हो विहार करना ।

—दीघनिकाय-महापरिनिब्बाणसुत्तं बुद्धचर्या पृ ५१७

The teaching of sects is not different. The large hearted man regards them as embodying the same truths. The narrow minded man observes only their differences.

भावार्थ—शिक्षा की दृष्टि से मजहबों में कोई भेद नहीं है । उदार चित्त आत्मा सभी मजहबों में सरीखे सत्य पाता है । छोटे दिल वाले को उनमें भेद ही भेद दिखाई देता है ।

(Lu Shun Yan)

तफ़रक़ा दर रूहे हैवानी बुवद
नफ़्से वाहिद रूहे इन्सानी बुवद ।

भावार्थ—भेद, अनैक्य मनुष्य में पशुता के सूचक हैं । अभेद और ऐक्य उसकी मानवता के लक्षण हैं ।

(सूफ़ी कवि)

अत् तरक़ुल इलल्लाही कअदा अन्फ़ुसा बेना आदमा ।

भावार्थ—जितने आत्मा हैं और उनके श्वास हैं उतने ही परमात्मा को पाने के रास्ते हैं ।

(हदीस)

रेह काम सिमिताणी बर्मो मेर्दैर्दिमिसते ।

भावार्थ—देशकाल और निमित्त के भेद से धर्म जुदे जुदे रूप धारण करता है।

(महाभारत)

अहो चित्र चित्रं तव चरित्तमेतन्मुनीपते
स्वीकीयानामेषा विविध विषय व्याप्ति वशिनाम्।
विपक्षापेक्षाणा कथयसि नयाना सुनयता
विपक्ष क्षेप्तृणा पुनरिह विभो दुष्ट नयताम्॥

भावार्थ—हे मुनीश! तुम्हारा धर्म विचित्र है। वस्तुओ के विविध धर्मों की अपेक्षा जो नय दूसरे मत को भी ठीक मान लेते हैं उन्हें शुद्ध नय कहते हो और जो नय दूसरे मत का खण्डन करते है उन्हें दुष्ट नय कहते हो।

—रत्नप्रभसूरि

समिय ति मन्नमाणस्स समिया वा असमिया वा समिया होइ उपेहास।

भावार्थ—सम्यक्त्वधारी आत्मा की भावना सम्यक् होती है इसलिए उसे सम्यक् अथवा असम्यक् कोई भी बात सम्यक् रूप से ही परिणत होती है।

आचाराग; लोकसाराध्ययन

ला इक्राहा फिद्दीने....लकुम् दीनकुम्
वाले याविम....उदु इले हे सबिला रब्बेका बिल हिकमते, वल मोअज्जे बिल हसनते।

भावार्थ—धार्मिक मामलो में बल-प्रयोग न होना चाहिये। आपको अपने श्रद्धा-विश्वास पर सन्तोष हो और मुझे अपने श्रद्धा-विश्वास पर। जो लोग परमात्मा को जानते है उन्हें भद्र उपायो से और मधुरवाणी से बुद्धिमत्तापूर्ण हितकर उपदेश देकर उन लोगो का पथ प्रदर्शन करना चाहिये जो कि परमात्मा के विषय में अज्ञान हैं।

—कुरान

अतिसार दिट्ठिया सो समत्तो मानेन मत्तो परिपुण्णमानी।
सयमेव साम मनसाभिसित्तो दिट्ठी हि सा तस्स तथा समत्ता॥

भावार्थ—हमारे ही मत में सत्य सार है इस प्रकार के विचार को आश्रय देकर ये वादविवादी लोग अपने को कृतकृत्य मान रहे हैं। अहंकार में मस्त हो ये पूर्ण अभिमानी बन बैठे हैं। अपने मान से ही अपने को अभिषिक्त कर रहे हैं। यह सब साम्प्रदायिकता को कलेजे लगाने का परिणाम नहीं तो क्या है ?

—*सुत्तनिपात: चूळवियूहसुत्त*

न खो आनन्द एत्तावता तथागतो सक्कतो वा होति गरुकतो वा, मानितो वा पूजितो वा अपचितो वा। यो खो आनन्द भिक्खु वा भिक्खुनी वा उपासको वा उपासिका वा धम्मानुधम्म पटिपन्नो विहरति सामीचि पटिपन्नो अनुधम्मचारी सो तथागतं सक्करोति गरुकरोति मानेति पूजेति परमाय पूजाय।

भावार्थ—हे आनन्द, इस (पुष्पवर्षा वाद्य एवं संगीत के) समारोह से न मेरा सत्कार सम्मान होता है न गौरव बढ़ता है, न पूजन ही होता है। किन्तु जो भिक्षु, भिक्षुणी उपासक या उपासिका धर्ममार्ग एवं समिति पर आरूढ़ हो उसका ठीक ठीक आचरण करता है वही मुझे वास्तव में सत्कार देता है मेरा सम्मान करता है, मेरा गौरव बढ़ाता है और मेरी पूजा करता है।

—दीघनिकाय: महापरिनिब्बानसुत्त

लोहा पारस का स्पर्श पाकर सदा के लिये सोना बन जाता है। ऐसे ही महापुरुषों के सम्पर्क से दुष्ट जन सज्जन बनते हैं।

नाम और रूप की उपाधि पाकर संसार में भिन्न भिन्न जीव हैं परन्तु *सभी में एक ही परम शुद्ध और नित्य आत्मा विद्यमान है।* अतः सबसे प्रेम रखो।

जैसे पतला धागा सुई में आसानी से पिरोया जाता है। इसी प्रकार अभिमान क्रोध आदि से रहित विनयशील पुरुष परमात्मा में लीन हो जाता है क्योंकि वह अकिंचन और नम्र है अर्थात् पतला है।

करोडो वर्षों तक समुद्र में डूबे रहने पर भी पत्थर में पानी प्रवेश नही कर सकता पर मिट्टी थोडे ही समय में गल जाती है। श्री रामकृष्ण परमहंस कहते हैं कि श्रद्धालु और विश्वासी लोग हजारो बार परीक्षा होने पर भी हताश नही होते किन्तु अविश्वासी पुरुष साधारण कारण आने पर ही बदल जाते है।

ज्ञानियो से अज्ञानी परिश्रम अधिक करते है जैसे इजीनियर और मजदूर। पर अज्ञानियो की अपेक्षा ज्ञानियो को फल अधिक होता है क्योकि ज्ञानी विवेकपूर्वक और अज्ञानी बिना समझे काम करते हैं। श्री लक्ष्मी-सूरिजी महाराज वीस स्थानक की पूजा में फर्माते हैं—'तत्त्वरस पामिया विहुणा क्रिया कहि ते वालक साल।'

ज्ञान का उपयोग दो प्रकार से होता है। महापुरुष ज्ञान का सदुपयोग करते है जब कि दूसरे उसका दुरुपयोग करते हैं। 'सा विद्या या विमुक्तये' अर्थात् वही यथार्थ विद्या है जो अविद्या का नाश कर परमपद को पहुंचाती है। शकराचार्य का भी यही मत है कि जो ब्रह्मज्ञान को देनेवाली है वही विद्या है।

जैसे मछुए गहरे समुद्र में गोते लगाकर मोती निकालते हैं वैसे ही महापुरुष गहरे उतरकर सार वस्तु ग्रहण करते हैं। जैसे गीध और चील आकाश में ऊँचे उडकर अपनी दीर्घ दृष्टि से केवल मरे हुए जानवर ही देखते हैं ठीक इसी तरह कई पढे लिखे विद्वान लोग भी अपनी बुद्धि का दुरुपयोग ही करते है।

There are two uses of knowledge The wise use it in a right way while others make misuse of it Knowledge is that which destroys ignorance and leads to salvation According to Shankara-charya, that which contributes to spirituality is only the real knowledge.

Just as the fishermen dive deep into the ocean and pick out pearls, so do the great seers dive deep and pick up the essential principles. There are some learned persons who abuse their knowledge. They are like those vultures and kites who with their long sight, look only for the carcasses from high above the sky

महापुरुष की जो भी बुराई व निन्दा करते हैं उनका वे कदापि बुरा नहीं करते प्रत्युत वे उनकी भलाई में ही लगे रहते हैं।

तीर्थंकर भगवान् महावीर को गोशाला ने अनेक सन्ताप दिये पर वे उनकी परवाह न करते हुए संसार के उपकार में डटे रहे। विष्णु (कृष्ण) की छाती में भृगु ने लात मारी पर उन्होंने बुरा न माना। क्राइस्ट को फाँसी पर चढ़ाया गया पर उन्होंने जगत् का भला ही किया। इसी तरह भगवान् बुद्ध जरतुस्त और मुहम्मद साहेब को भी दुष्टों ने अनेकानेक कष्ट पहुँचाये पर वे महापुरुष अपने उपकार के आदर्श पर डटे रहे।

Great men do not mind the evils done by the evil-doers but are always engaged for their good.

Tirthankar Lord Mahavir was given many a trouble by Goshala but he did not care for them. He went on with doing good of the world. Bhrigu kicked Vishnu (Krishna) in the chest but he did not take it ill Christ was hanged but he still did good of the world. In the same way the Great Lord Buddha, Jerutsu and Mohammad were greatly harrassed by the evil doers but they stuck themselves to the great ideal of doing public good.

जिन लोगो के पास बुद्धि नही है उनसे बुद्धि की आशा करना मूर्खता है। जिन लोगो के पास दया नही है उनसे दया चाहना मूर्खता है। ऐसे ही जो ब्रह्मज्ञान से रहित हैं उनसे ब्रह्मज्ञान की और जो स्वय अशान्त हैं उनसे शान्ति की इच्छा रखना भी निरी मूर्खता है।

जो लोग ऐसे लोगो से बुद्धि, दया आदि की इच्छा रखते हैं वे स्वय इच्छा रखने के साथ ही मूर्ख वनते हैं। साथ ही वे बुद्धि का नाप और नीलाम भी करते हैं।

It is folly to expect knowledge from those who are devoid of it, it is folly to hope for mercy from the merciless Likewise it is but sheer folly to desire for spiritual knowledge and peace from those who lack in spirituality and are themselves peaceless.

Those who expect knowledge, mercy etc. from such people, do befool themselves from the very time they desire for them. Moreover, not only do they put their intelligence at a discount but also set it for auction

रागी मनुष्य के उपदेश में स्वार्थ का अश अवश्य रहता है। वीतराग का उपदेश एकान्त परमार्थोपदेश है।

Advice given by people whom passion governes, is always marred by selfish regards The advice of the passionless alone can guide thee towards thy very welfare

हे मनुष्यो, ससार के क्लेशो से यदि तुम्हें घृणा उत्पन्न हुई है, और

मृत्यु के दुखों से उद्विग्न हुए हो तो विषय की छाया में एक क्षण भी विश्राम मत करो—उससे दूर ही रहो।

If the quarrels of this world have filled thee with disgust and the terrors of death with apprehension, beware, O man! from reposing thy self in the shadow of sensual pleasure! keep aloof from it! keep far aloof!

रोग की शान्ति के लिये जैसे औषधि उपयोगी है वैसे मद-अहंकार अभिमान को दूर करने के लिये मृदुता यह परम औषध है।

Mildness is an excellent remedy against Pride, Arrogance and Conceit.

लोभ की विद्यमानता में सभी दुर्गुण वास करके एकत्रित होते हैं और लोभ के अभाव में मनुष्य सद्गुणी बना रहता है।

Around 'Desire' all the vices seem to flock together.

If desire is absent, man is virtuous.

मोह की जंजीर शरीर के बल से तोड़ी जा सकती है, परन्तु मोह की जंजीर अन्य किसी शक्ति से नहीं तोड़ी जा सकती सिवाय एक वैराग्य के।

An iron chain can be broken by physical strength, but the chain 'Infatuation' Cannot be shattered, except with the help of the tool, Aversion from the world.

जिस सुख के अन्त में दुःख है वह वस्तुतः सुख नहीं परन्तु दुःख ही है और जिस दुःख के अन्त में सुख है वह दुःख नहीं परन्तु सुख है।

Happiness followed by pain, is pain, and not

happiness and pain followed by happiness is happiness, and not pain

वीरो का भूषण क्षमा है। जहां क्षमा का अभाव और क्रोध का प्रभाव है वहां अहिंसा महादेवी का निवास नही हो सकता।

Forgiveness is an ornament of the followers of Vira Where Forgiveness is absent and wrath dominates, there the great Goddess Non-Injury will never come to dwell

निन्दा करने से अपनी शुद्ध क्रिया भी दूसरे की अशुद्ध क्रिया के बराबर हो जाती है।

Slandering pulls our own pure actions down to the level of the impure ones of others

शुभाशुभ प्रवृत्ति, यह धर्म और अधर्म का सक्षिप्त स्वरूप है। शुभ प्रवृत्ति वह धर्म, अशुभ प्रवृत्ति वह अधर्म।

Piety is nothing but good acting and impiety nothing but evil acting

जहां कदाग्रह होता है वहां धर्म नही हो सकता।

Obstinacy excludes piety

शान्ति का बढ़ना, विषयेच्छा का कम होना, न्यायनीति का पालन और दुनिया के समस्त जीवो के साथ प्रेम का होना इसीका नाम धर्म है।

With the increase of tranquility, sensuality fades away, justice and morals rule, and love towards all creatures becomes manifest this is called piety.

भक्ति, यह मुक्ति के लिये होनी चाहिये, न कि दुश्मन के क्षय, धन की पूर्ति किंवा यशोवाद के लिये।

Neither the destruction of our enemies, nor the increase of our fortune, nor the attainment of renown ought to be the motive of our devotions, but salvation only and alone.

प्रियता किंवा अप्रियता किसी चीज में नहीं रहती है परन्तु मनुष्यों की परिणति ही राग द्वेष वाली होने से किसी को एक चीज प्रिय मालूम होती है और वही वस्तु दूसरे को अप्रिय।

No object is in itself endowed with the quality of being dear or hateful. Our own disposition for loving or hating makes one object dear to us and another hateful. This is why one and the same object so often appears dear to us and hateful to some one else.

ज्ञान के साथ ही क्रिया फलवती होती है और ज्ञान भी तभी सफल होता है जब वह क्रिया के साथ हो।

Religious actions are fertile only if combined with *knowledge and religious knowledge is fertile* only if combined with actions.

जो मनुष्य लोभ को अपने आधीन करता है वही संसार में सच्चा स्वामी योगी और संसार से सर्वथा विमोगी है।

He who subdues desire is a true ascetic, a true sage and though living in the world, still aloof from it in every respect.

परदोष को प्रगट करने का स्वभाव स्वदोष की वृद्धि करनेवाला होता है और वह दुर्गति का महाकारण कारण है।

The habit of exposing other's faults not only adds to our own faults, but also helps to create bad propsects for our own after-lives.

दूसरे के उत्कर्ष को नही सहन करनेवाला—दूसरे का अपकर्ष करने वाला कभी कीर्ति प्राप्त नही कर सकता।

He who cannot see other's merits without debasing them, will never gain renown,

परात्मा की रक्षा के लिये स्वात्मा अर्पण कर देना यही भगवान् वीर की शिक्षा है—आज्ञा है।

It is one of the chief commandments of Lord Vira to save others lives even at the cost of our own

ऐसे रिवाज जो धर्म के लिये कलक रूप है उन्हे बन्द कर देने में धर्म की हानि नही किन्तु दृढता है—उज्ज्वलता है।

The suppression of such customs as are stain on religion, is no way harmful to religion but helps to establish religion itself so much the firmer.

जिस क्रिया से मनोवृत्तियाँ शुद्ध हो, उसीका नाम धार्मिक क्रिया है।

Religiousness is that attitude or activity by which thinking and feeling are being purified.

इष्ट के सयोग में राग और वियोग मे द्वेष नही करना चाहिये, वैसे ही अनिष्ट के सयोग में द्वेष और वियोग में राग नही करना चाहिए।

On being united with the desirable, thou shalt not exult, and on being seprated from it, that shalt not grieve Nor shalt thou grieve on being united with the undesirable, nor exult on being separated from it

किसीके शरीर का नाश करना उसीका नाम हिंसा नहीं है, किन्तु द्वेषबुद्धि से किसी को मानसिक दुःख देना यह भी हिंसा है।

Not only destroying another's body is violence, but violence comprises the causing of any pain to another creature in inimical intention.

हिंसा करके प्रायश्चित्त करना यह कीचड़ में पैर भरकर धोने के बराबर है।

To commit injury and afterwards atone for it, is just like soiling one's feet with mud and then washing them.

भय से व्याप्त इस संसार में वही मनुष्य सदा निर्भय रह सकता है जो सब जीवों पर दया करता है।

In this world, which is so full of fears, only he can live fearlessly who practises compassion towards all creatures.

जितने अंशों में ब्रह्मचर्य की विशेष रक्षा की जाय उतने ही अंशों में महान् कार्य करने की शक्ति प्रबल होती है।

The faculty of performing great deeds grows in the measure in which one preserves one's chastity.

शास्त्र मर्यादा का उल्लंघन कर अनीतिपूर्वक काम का सेवन करने वाला काम पुरुषार्थ की साधना नहीं करता—परन्तु कुकर्म करता है—दुराचार का सेवन करता है।

He who, transgressing the limits drawn in the sacred writings, indulges in sexual enjoyment in a way discordant with Ethics, does not accomplish one of the aims of human life, but commits a crime.

वृद्धावस्था, यह वुद्धि का खजाना और अनुभव ज्ञान की मूर्ति तभी बन सकती है, जब प्राथमिक जीवन में सावधानीपूर्वक ब्रह्मचर्य पालन किया गया हो।

Old age can indeed be a treasury of wisdom and an embodiment of empirical knowledge, provided it has been preceded by a period of strictly observed sexual abstinence.

विनय, विवेक और सन्तोषादि गुण उस स्त्री और पुरुष में आकर निवास करते है जो मन वचन काया से अपने शीलव्रत की रक्षा करता है।

Modesty, discretion, contenment and all other virtues take their permanent seat in the heart of such men and women as have preserved their chastity in full

समय विशेष तक विषय सेवन कर लेने से पूर्ण तृप्ति हो जाती है यह आशा रखना व्यर्थ है। क्या घी सीचने से कभी अग्नि शान्त होती है।

The hope of fully gratifying sensual desire by indulging in it for a time, is vain Has one ever calmed down fire by feeding it with melted butter

वास्तविक सुख की पराकाष्ठा में पहुँचना, यही सच्ची आत्मोन्नति है।

Reaching the summit of genuine happiness is truest self perfection

दुष्कर्म के नाश का सच्चा उपाय सद्विचार और सदाचार है।

Good conduct and good thought are the best expedients to annihilate evil actions

जैसे रत्नों का आधार समुद्र और प्राणीमात्र का आधार पृथ्वी है वैसे समस्त गुणों का आधार सम्यग्दर्शन (उत्तम श्रद्धा) है।

As the ocean is the support of all jewels, and the earth the support of all beings, just so Right Faith is the support of all virtues.

श्रद्धा और चारित्र रहित ज्ञान निरर्थक है वह कार्यसिद्धि नहीं कर सकता।

Knowledge without Faith and Good Conduct is useless. It cannot lead to the accomplishment of any object whatsover.

शुभ कर्म वाले मनुष्य के पास सभी सम्पदाएं गुणाधीन होकर अपने आप चली आती हैं।

With a person, in whom the latent efficacy of former good deeds is still operative, wealth becomes dependent on virtue, and spontaneously hastens to join it.

संसार में भिन्नता भले ही रहे किन्तु विरोध न हो। स्पर्धा भले ही रहे किन्तु ईर्ष्या न हो।

Let there be diversity in the world but let there be no enmity Let there be competition but let there be no jealousy